ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 15 फरवरी 2026 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 15 फरवरी 2026 से 21 फरवरी 2026

माघ कृ. 13 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 67, अंक 07, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 201 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रू. ● वार्षिक शु. 300/- रू.

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती जन्मोत्सव पर आयोजित अखिल भारतीय वैदिक संगीत संगोष्ठी सम्पन्न

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती के जन्मदिवस पर 'अखिल भारतीय वैदिक संगीत संगोष्ठी' का आयोजन आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली के सभागार में समारोह पूर्वक किया गया जिसमें 100 डी.ए.वी. विद्यालयों के 112 संगीत अध्यापकों ने प्रतियोगी के रूप में अपनी प्रस्तुतियाँ दीं। तीन दिन तक चली प्रतियोगिता का उद्घाटन श्री अजय सूरी, उपप्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं महासचिव डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति दिल्ली ने किया।

प्रतियोगिता दो चरणों में हुई। पहले दो दिन प्राथमिक चरण में प्रत्येक प्रतियोगी की प्रस्तुति हुई द्वितीय चरण में पहले चरण में प्राप्त अंकों के आधार पर पहले 35 गायकों/गायिकाओं को चुना गया। ये सभी प्रस्तुतियाँ वैदिक भजनों और गीतों के रूप में हुईं।

निर्णायकों के निर्णयानुसार निम्न प्रतियोगियों को पहले तीन स्थानों के लिए चुना गया। श्री भानु कुमार, डी.ए.वी. सेंटनेरी पब्लिक स्कूल, जयपुर, **प्रथम,** श्री तुलसीदान, डी.ए.वी. तलवण्डी, कोटा **द्वितीय** तथा श्री रूपक कुमार पारीदा, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, चन्द्रशेखर

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पश्चिम बंगाल में 'चरित्र निर्माण शिविर'

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पश्चिम बंगाल के तत्त्वावधान में आर्यसमाज एवं आर्य युवा समाज के द्वारा चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पुरुलिया के प्रांगण में किया गया। योगाभ्यास से चरित्र

सायंकालीन वेला में भजन संध्या का आयोजन किया गया। भजन–संध्या पर पश्चिम बंगाल की प्रधान श्रीमती पापिया मुखर्जी एवं समस्त प्राचार्यगण उपस्थित रहे। भजन संध्या में प्रत्येक विद्यालय से छह–छह प्रतिभागियों का समूह भाग रहा था।

निर्माण शिविर का प्रारंभ हुआ। प्रातः 9:00 बजे विद्यालय के अध्यक्ष श्रीमान शरद खेडिया एवं प्राचार्य श्री डी.आर. माहंती ने एवं समस्त प्राचार्यगण के साथ मिलकर ओ३म्–ध्वज फहराकर शिविर का औपचारिक उद्घाटन किया।

ध्वजारोहण के पश्चात् 51 कुण्डीय विश्वकल्याण महायज्ञ प्रक्षेत्र के 20 विद्यालयों ने भाग लिया।

उपसभा–प्रधान महोदया ने शिविरार्थियों को भी सम्बोधित करते हुए कहा कि डीएवी संस्थान सदा ही ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा के साथ–साथ छात्रों संस्कारित करने का काम भी करता रहा है इसलिए आप सबको इस चरित्र निर्माण शिविर में व्यावहारिक ज्ञान और नैतिक शिक्षा का प्रशिक्षण

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

आर्यसमाज धामा वाला में वेद प्रचार

आर्यसमाज धामा वाला में साप्ताहिक सत्संग में यज्ञोपरान्त भजन एवं स्वामी दयानन्द के जीवन के प्रकरणों का उल्लेख हुआ। पं. विद्यापति शास्त्री जी ने यज्ञ कराया व भजन प्रस्तुत

मार्ग अपनाकर अपना जीवन सफल बना सकते हैं, मोक्ष के अधिकारी बन सकते हैं। जो वस्तु जैसी है उसे उसी रूप में समझना विद्या है और उसके यथार्थ स्वरूप के विपरीत समझना अविद्या है। सत्य सर्वदा एक ही होता है। अविद्या के

किया।

आर्यसमाज के विद्वान् आचार्य प्रदीप मिश्रा जी ने अपने व्याख्यान में कहा कि मानव जीवन सुख–दुख मिश्रित है। हम केवल सुख चाहते हैं दुख को नहीं चाहते फिर भी यह हमारे कर्मों के अनुसार ही हमें मिलता है, अतः हमें पापरूपी कर्मों से बचना चाहिए और पुण्य कर्मों में प्रवृत्त रहना चाहिए। हम शरीर को आत्मा मानते हैं इसीलिए हमें मृत्यु से डर लगता है। यही अविद्या है। इसी अविद्या को छोड़कर हम कल्याणकारी

पूर्णतः दूर होने पर ही हमें कैवल्य (मोक्ष) की प्राप्ति होगी।

हमारे जीवन का प्रमुख लक्ष्य आत्मा परमात्मा से साक्षात्कार करना अर्थात् मोक्ष प्राप्त करना है इसके लिए मानव को योग के सभी अंगों को सिद्ध व सफल करना है, योगदर्शन का अध्ययन कर तद्नुकूल अपना आचरण करना है।

अन्त में पं. विद्यापति शास्त्री ने आचार्य प्रदीप मिश्रा जी का विशेष धन्यवाद किया।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

{संपादक – पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 15 फरवरी 2026 से 21 फरवरी 2026

मनोयुजा धी तथा पार्थिव और दिव्य सम्पत्ति

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

त्वं धियं मनोयुजं, सृजा वृष्टिं न तन्यतुः।
त्वं वसूनि पार्थिवा, दिव्या च सोम पुष्यसि।।

ऋग् ९.१००.३

ऋषिः रेभसूनू काश्यपौ। देवता पवमानः सोमः। छन्दः अनुष्टुप्।

● (**सोम**) हे सोम परमेश्वर!, (**त्वं**) तू, (**मनोयुजं**) मन से संयुक्त, (**धियं**) बुद्धि और क्रिया को, (**सृज**) उत्पन्न कर, (**तन्यतुः**) विद्युत्, (**वृष्टिं न**) जैसे वर्षा को उत्पन्न करती है, (**त्वं**) तू, (**पार्थिवा**) पार्थिव, (**दिव्या च**) और दिव्य, (**वसूनि**) ऐश्वर्यों को, (**पुष्यसि**) पुष्ट कर।

● हे सोम परमेश्वर! तुम्हारे अन्दर अपूर्व सर्जनात्मक शक्ति है, तुम सम्पूर्ण चराचर जगत् का ही सर्जन करनेवाले हो। अतः मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम मेरे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' का सर्जन करो। वैदिक 'धी' में बुद्धि और क्रिया–शक्ति दोनों सम्मिलित हैं। मन का कार्य संकल्प और विचार करना, तथा बुद्धि का कार्य अध्यवसाय या निश्चय करना है। हमारी बुद्धि मनःसयुक्त हो, अर्थात् हम जो कुछ निश्चय करें वह मन से सोच विचार के उपरान्त ही करें, क्योंकि बिना विचारे सहसा किया गया निश्चय प्रायः भ्रान्त होता है। इसी प्रकार हमारी क्रिया भी मनःसंयुक्त हो, अर्थात् हम कर्म भी विचार–पूर्वक ही करें। जैसे विद्युत् मेघ से वृष्टि उत्पन्न करती है, वैसे ही तुम हमारे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' को उत्पन्न करो, 'धी' की वर्षा करो। उस 'धी' की वृष्टि में संस्नात होकर हम अपने अन्दर प्रबोध, चैतन्य, स्फूर्ति, प्रफुल्लता को अनुभव करें।

हे सोम प्रभु! तुम ऐश्वर्यशाली हो। तुम मुझे पार्थिव और दिव्य दोनों प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करो। पार्थिव ऐश्वर्यों में हम तुमसे धन–धान्य, पुत्र, पशु, दुग्ध, घृत, वस्त्र, उत्तम गृह, भूमि, खेत, बाग–बगीचे आदि की समृद्धि चाहते हैं। वेद ने गृह–समृद्धि का चित्रांकन करते हुए कहा है कि हमारी चिरकाल तक स्थिर खड़ी रहनेवाली शाला में अश्व हों, गौएँ हों, सूनृता हो, अन्न हो, घृत हो, वत्स हों, कुमार हों, तरूण हों, दूध से भरे घड़े हों, दही के मटके हों। हमारे घरों में तुम ऐसा ही चित्र ला दो। हम समृद्धि–पूर्वक इस प्यारे लोक में हँसते–खेलते, नाचते–गाते दीर्घ जीवन पाते हुए आगे बढ़ें। साथ में तुम हमें दैवी सम्पत् भी प्रदान करो, जिसे भगवद्गीता में अभय, सत्व–संशुद्धि, ज्ञानयोग–व्यवस्थित, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपैशुन, भूतदया, अलोलुपत्व, मार्दव, ह्री, अचापल्य, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह, अतिमानिता का अभाव, इन नामों से परिगणित किया गया है। इन पार्थिव और दिव्य उभयविध ऐश्वर्यों को हमें प्रदान करके तुम सदा इन्हें परिपुष्ट करते रहो, जिससे कभी ये क्षीण न हों, प्रत्युत अधिकाधिक बढ़ते ही जाएँ। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु–भक्ति

● महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

प्रभु–भक्ति पुस्तक में स्वामी जी ने धन के वास्तविक स्वामी की विवेचना की है कि यह धन किसका है ?
उत्तर–ईश्वर द्वारा प्रदत्त तो ईश्वर का ही है। परन्तु उपभोग मनुष्य कर रहा है तब स्वामी जी कहते हैं कि भोग तो मानव ! तू ही इसका कर परन्तु **'तेन त्यक्तेन भुंजीथा'** अर्थात् इसका भोग त्याग पूर्वक कर, इससे लिप्त मत हो। धन खूब कमाओ परन्तु त्याग पूर्वक उसका उपयोग करो। शांति का मूल आधार है मन का चंचल न होना, मन का स्थिर होना, इच्छाओं को सीमित रखना।

अपनी इन्द्रियो के द्वारों को रोककर मन को हृदय में स्थिर करें, योग के अंगों का पालन करे तब ओ३म् का जाप व चिन्तन करें तो मनुष्य परमगति को प्राप्त कर लेता है जो कि आत्मा का परम लक्ष्य (मोक्ष प्राप्ति) है।

.... अब आगे

भगवान् का मन्दिर

ज्यूँ तिल माहीं तेल है,
ज्यूँ चकमक में प्राग।
तेरा प्रभु तुझमें बसे,
जाग सके तो जाग।।

यह तो भगवान् का मन्दिर है। पता नहीं इसे मनुष्य शरीर का नाम क्यों दिया गया है। यही वह स्थान है, जहाँ सचमुच परमात्मा के दर्शन किये जा सकते हैं। निस्सन्देह, परमात्मा सर्वव्यापक है। संसार के अणु–अणु में वह इसी प्रकार रमा हुआ है, जैसे हर वस्तु में अग्नि विद्यमान है। अग्नि का किसी भी स्थान पर आह्वान कीजिये, उसे प्रकट करने के साधन एकत्रित कीजिये, वह प्रकट हो जायेगा परन्तु परमात्मा हर स्थान और हर वस्तु में होते हुए भी हर जगह दृष्टिगोचर नहीं हो सकता। उसके दर्शन केवल इस मन्दिर में ही हो सकते हैं। इसका कारण यह है कि परमात्मा को देखनेवाला नेत्र केवल इस मन्दिर के ही भीतर खुलता है। परमात्मा और जीवात्मा का मिलाप यहीं भली–भाँति होता है। यहीं होता है संगम इन दोनों का, यही है वह मन्दिर जिसके सब बाह्य द्वार बन्द कर जब मन भीतर बैठ एकाग्र और निर्विषय हो जाता है, तब वह प्रकाश स्वयमेव प्रकट हो जाता है, जिसे देखने की उत्कण्ठा तथा लालसा आत्मा को इस बन्दी शरीर में ले आती है। इस ज्योति को देखने से कैसा प्रानन्द प्राप्त होता है–इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यह तो वह स्वाद है जिसे स्वयं ही अनुभव किया जा सकता है। किसी के बतलाने का न यह विषय है और न बतलाया ही जा सकता है।

ऋषि वास्कलि एक बार योगेश्वर श्री वाधव के योगाश्रम में पहुँचे और प्रार्थना की – "भगवन् ! सच्चिदानन्द परब्रह्म का स्वरूप आपने देखा है, उसका वर्णन कीजिये कि वह स्वरूप कैसा है ?"

वाधव महाराज चुपचाप बैठे रहे, कुछ बोले नहीं। थोड़ी देर बाद ऋषि वास्कलि ने फिर वही प्रश्न किया। अब भी वे चुपी ही साधे रहे। तीसरी, चौथी बार भी यही प्रश्न किया और उत्तर भी वही–मौन ही मिला। बार–बार एक ही प्रश्न दोहराते हुए जब वास्कलि ऋषि उकता गये तो कहने लगे–"मेरी जिज्ञासा का उत्तर देकर मेरे तप्त–हृदय को आप शान्त क्यों नहीं करते ?" तब योगेश्वर वाधव कुछ मुस्कराकर बोले–"अरे वास्कले ! तेरे प्रश्नों का उत्तर तो साथ ही साथ तत्काल देता रहा हूँ। यदि समझ में न आये तो इसमें मेरा क्या दोष ? भाई ! स्वरूप कोई वाणी से बतलानेवाली वस्तु नहीं। यहाँ तो सब वाणियाँ पहुँचकर मौन साध लेती हैं और जब लौटकर आती हैं तो कुछ बोलने में असमर्थ होती हैं। इस 'गूंगे के गुड़' का स्वाद कैसे बतलाया जाये ? और निश्चय ही यह विवाद इस मन्दिर ही में मिलता है, संसार की और किसी वस्तु में नहीं !"

छान्दोग्य उपनिषद् के अन्तिम प्रपाठक के आरम्भ में 'ब्रह्मपुर' का वर्णन किया है। ब्रह्म तो सर्वत्र है और सर्वव्यापक है, फिर उसकी कोई पुरी कैसे हो सकती है ? हाँ, यह मनुष्य–शरीर ही उसकी नगरी है, इसी में ब्रह्म को पहचाननेवाला रहता है। छान्दोग्य के इन शब्दों पर ध्यान दीजिये, ऋषि कहता है–

यदिदमस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं पुरण्डीकं वेश्म दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशः।
तस्मिन् यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति।।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

शिवरात्रिः कल्याण की रात्रि

● रामनिवास 'गुणग्राहक'

पौराणिक पर्व के रूप में न जाने कब से शिवरात्रि का पर्व भारत भर में मनाया जाता है। जब से सत्य सनातन वैदिक धर्म के सच्चे स्वरूप में पौराणिकता का प्रदूषण प्रविष्ट हुआ है, तब से वैदिक धर्म–दर्शन व संस्कृति का हर पक्ष उसकी चपेट में आता चला गया। पर्वों की ही बात करें तो श्रावणी उपाकर्म को रक्षाबन्धन, विजया–दशमी को दशहरा, शारदीय नवान्नेष्टि को दीपावली और बासन्ती नवन्नेष्टि को होली के रूप में मनाना पौराणिक प्रदूषण का ही प्रतिफल है। आर्य समाजस्थ विद्वानों, लेखकों व उपदेशकों का कर्त्तव्य है कि सब मिलकर इन पर्वों के सांस्कृतिक स्वरूप के प्रति जन–मानस में जागृति लाने का अभियान चलाएँ। दैनिक समाचार पत्रों में इन पर्वों के सांस्कृतिक महत्व को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के साथ प्रतिपादित करने वाले लेख लिखें! प्रचार–पत्रों (पैम्प्लेट) व विद्यालयों में सतर्क–सप्रमाण प्रवचन करके अथवा सेमिनम्–संगोष्ठी आदि के द्वारा समाज के शिक्षित वर्ग तक पर्वों के सांस्कृतिक स्वरूप को पहुँचाएँ। भारतीय जनमानस में भरी पड़ी भ्रान्तियों का भण्डार कितना बड़ा है, इसका अनुमान शारदीय नवानेष्टि के दीपावली बनने से हो जाता है। पूछो कि दीपावली क्यों मनाते हैं? तो सभी एक स्वर से कहेंगे कि इस दिन श्रीराम वनवास से लौटकर अयोध्या आए थे। उनके आगमन की प्रसन्नता में अयोध्यावासियों ने पटाखे चलाकर खुशी प्रकट की थी। एक छोटा–सा प्रश्न पूछ लीजिये कि ऐसा कहाँ लिखा है? तो उनके पास उत्तर नहीं है। रामायण हो या रामचरित मानस–ऐसा उल्लेख कहीं नहीं मिलता। तुलसीकृत राम चरित मानस तक में उल्लेख है कि श्री राम को चैत्र मास में वनवास हुआ था। किसी से पूछकर देखो कि चैत्र मास में दिए गए वनवास के चौदह वर्ष कौन से माह में पूर्ण होंगे? मूर्ख व्यक्ति भी कार्तिक में नहीं बताएगा, मगर सारा भारत –श्रीराम के वन से पुनरागमन के उपलक्ष्य मे बिना विचारे, बिना बुद्धि लगाये कार्तिक मास में पटाखे चला रहा है। हम आर्यजन देश को इस भयंकर भ्रान्ति से मुक्त करने के लिए जो कुछ कर रहे हैं, लगता है कि वह पर्याप्त नहीं है।

शिवरात्रि की बात करें तो आर्यों के लिए इसका मूल्य शिवरात्रि के रूप में न होकर 'बोधपर्व' के रूप में है। पण्डित नारायण प्रसाद 'बेताब' इस शिवरात्रि को लेकर बड़े अनूठे ढंग से अपने भाव व्यक्त करते हुए इसे धन्यवाद देते हैं। शिवरात्रि को होने वाली मूर्ति पूजा को धन्यवाद देते हुए लिखते हैं–

सुन अय बुतपरस्ती अगर तू न होती।
तो मिलता न हमको वह अनमोल मोती।।
तेरे लाख ऐबों से तो दूर हूँ मैं।
फकत एक खूबी से मशकूर हूँ मैं।।
जो उपवास होता न शिवरात्रि का।
न होती जो मन्दिर में शिवलिंग पूजा।।
न पूजा में फल–फूल चढ़ता चढ़ावा।
निकलता न वह चार चखने को चूहा।।
किया जिसने साबित सरे लिंग चढ़कर।
खुदा को खुदा और पत्थर को पत्थर।।
डरा एक चूहा भी जिससे न घर में।
बिठायेगा क्या रौब वह विश्व भर में।।
मैं सुनता था शक्ति महा ईश्वर में।
मगर शून्य है वह तो मेरी नजर में।।
फक्त एक पत्थर तराशा हुआ है।
जो अज्ञानियों को तमाशा हुआ है
मुबारक हुआ इन खयालों का आना।
मुबारक वह शब भी मुबारक जमाना।।
मुबारक हुआ वह चढ़ावा चढ़ाना।
मुबारक हुआ उस चूहे का खाना।।
मुनासिब न था आज खामोश होना।
बुराई है अहसान–फरामोश होना।।
न मंजूर भी जब बुतों की गुलामी।
रही फिरन कुछ मूलशंकर में खामी।।
बने वो महर्षि दयानन्द स्वामी।
तरफदार हक के सिदाकत के हामी।।
नये सर से भारत में हलचल मचा दी।
अविद्या की विद्याने हस्ती मिटा दी।।
जहाँ सामने आये वादी–विवादी।
वहीं मुँह पे मोहरे–खमोशी लगा दी।।

जो घटना टंकारा के शिव–मन्दिर में चौदह वर्ष के अबोध बालक मूलशंकर के सामने घटी, वह तब से लेकर आज तक न जाने कितनी बार और न जाने कितने वयोवृद्ध अबोधों के सामने घटी होगी। क्या किसी ने ऐसी किसी घटना को बालक मूलशंकर की दृष्टि से देखा? परिपक्व आयु और अनुभव जन्य बौद्धिक प्रतिभा से सम्पन्न किसी अन्य व्यक्ति के पास मूल शंकर वाली बौद्धिकता होती तो विश्व को दूसरा दयानन्द मिल गया होता। अगर देश को ऐसे 5–10 दयानन्द मिल जाते तो न केवल देश में अपितु भूमण्डल भर में मूर्ति पूजा, अवतारवाद, पीर–पैगम्बर की प्रवृत्ति के साथ–साथ धर्म और ईश्वर के नाम पर चल रहे अन्धविश्वास ढूँढे न मिलते। बोध और अबोध की सरल–सी कसौटी यही है कि बोध–प्राप्त पुरुष दयानन्द बनकर विश्व–कल्याण के लिए जीवन समर्पित कर देती है। बोध–प्राप्त पुरुष का मन–मस्तिष्क दोगलेपन को अस्वीकार कर देता है। बोध–प्राप्त पुरुष के हृदय में प्रेम और अपनत्व की ऐसी धारा बहती रहती है, जिसके निकट जाकर कोई भी मोह शून्य ममता प्राप्त कर सकता है। बोध इस विचार को भरोसा–विश्वास बना देता है कि आत्म कल्याण का लक्ष्य जन कल्याण के रास्ते चल कर ही प्राप्त हो सकता है। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि बोध–प्राप्त पुरुष ही सच्चे अर्थों में अपना और विवेकवान् पुरुषों का कल्याण कर सकता है।

जो घटना टंकारा के शिव-मन्दिर में चौदह वर्ष के अबोध बालक मूलशंकर के सामने घटी, वह तब से लेकर आज तक न जाने कितनी बार और न जाने कितने वयोवृद्ध अबोधों के सामने घटी होगी। क्या किसी ने ऐसी किसी घटना को बालक मूलशंकर की दृष्टि से देखा ? परिपक्व आयु और अनुभव जन्य बौद्धिक प्रतिभा से सम्पन्न किसी अन्य व्यक्ति के पास मूल शंकर वाली बौद्धिकता होती तो विश्व को दूसरा दयानन्द मिल गया होता। अगर देश को ऐसे 5-10 दयानन्द मिल जाते तो न केवल देश में अपितु भूमण्डल भर में मूर्ति पूजा, अवतारवाद, पीर-पैगम्बर की प्रवृत्ति के साथ-साथ धर्म और ईश्वर के नाम पर चल रहे अन्धविश्वास ढूँढे न मिलते।

बोध और आर्यसमाजः–विचार कर देखें कि आर्य समाज क्या है? तो हम कह सकते हैं कि आर्य समाज एक बोध–प्राप्त पुरुष के द्वारा बोध– प्राप्ति की प्रवृत्ति पनपाने का पुण्य–पुरुषार्थ है। सरल शब्दों में कहें तो सबके लिए बोध के हम खोलने के अभियान का नाम ही आर्य समाज है। आर्य समाज से जुड़कर यदि किसी ने बोध पाने और अपने निकट आने वालों में बोध की तलक जगाने का काम न किया तो उसके लिए तो आर्य समाज से जुड़ना उपनिषद की भाषा में 'महती विनष्टि' जैसा ही है। महर्षि दयानन्द जैसे बोध–सुलभ पुरुष के पथ पर चलना अबोधों के लिए भला कैसे सम्भव है? हम अबोधों के लिए तो महर्षि के मन्तव्यों को समझ पाना ही सम्भव नहीं लगता। हमारी स्थिति एक छोटी–सी कहानी से समझी जा सकती है। कहानी इस प्रकार है–

एक जंगल में शिकारियों द्वारा पक्षियों को जाल में फँसाकर पकड़ते और मारते हुए देखकर एक दयालु पुरुष ने विचार किया कि इन्हें बचाना चाहिए। उसने कुछ तोते पकड़े और उन्हें सिखाया "शिकारी आयेगा, जाल बिछायेगा, दाना डालकर हमें जाल में फँसायेगा, उसके जाल में मत फँसना, नहीं तो मारे जाओगे। शिकारियों से बचाने के लिए उस महा पुरुष ने उन तोतों को भली–भाँति यह बोलना सिखा दिया। जब तोते यह सीख गये तो उस दयावान पुरुष ने उन्हें उसी जंगल में छोड़ दिया। अगले दिन शिकारी आये और देखा कि कुछ तोते ठीक वैसा ही बोल कर सबपक्षियों को चेतावनी दे रहे थे। शिकारी बोले–अरे अब हम पक्षियों को नहीं पकड़ सकते। अब तो ये हमारे जाल में नहीं फँसेंगे। उनमें से एक बोला– कोई बात नहीं, एक बार दाना डालकर और जाल बिछाकर देखें तो सही। उन्होंने वैसा ही किया और देखा कि जो तोते बोल–बोलकर सब को समझा रहे थे, वे सबसे पहले कर दाना चुगने लगे और जाल में फँस गये। जाल में फँसे हुए भी वे तोते उस महामानव द्वारा सिखाई हुई बात बोलते जा रहे थे। शिकारी यह सब देख–सुनकर हँस रहे थे।

यह तो हुई कहानी, अब उस कथ्य और तथ्य पर विचार करें, जिसके लिए यह कही गई है। इस दयालु पुरुष ने उन तोतों को यह सब इस भावनासे सिखाया था कि वे जंगल के पक्षियों को शिकारियों के जाल में फँसकर मरने से बचा लें। मगर जब वो स्वयं वह सब बोलते हुए स्वयं ही दाना चुगने के लालच में जाल में फँस रहे है, तो वे दूसरों को क्या बचाएँगे? हम चाहे इस कहानी के तोतों की मूर्खता पर हँस सकते हैं कि कैसे मूर्ख तोते थे जो बचने के लिए बोलते–बोलते स्वयं उसी जाल में फँस रहे थे! हँसलो, मगर मत भूलो कि कोई समझदार हमारी मूर्खता पर भी हँसेगा। आने वाला इतिहास आर्य उपदेशकों, आर्य विद्वान् कहलाने वालों की ऐसी ही मूर्खता पर अट्टाहस करेगा। इतिहास कहेगा कि वेद के विद्वान् और ऋषि दयानन्द के भक्त बनकर जो वर्णाश्रम व्यवस्था की सीख दूसरों को दे रहे थे वे न तो वर्ण

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

गतांक से आगे...

भारतीय नवजागरण और स्वामी दयानन्द सरस्वती

● डॉ. ज्वलन्तकुमार शास्त्री

16. दयानन्द और हण्टर भाषा आयोग–स्वामी दयानन्द ने हिन्दी–भाषा और देवनागरी लिपि का सामान्य जनता में ही प्रचार–प्रसार नहीं किया है, अपितु उन्होंने हिन्दी को राज–भाषा के गरिमामय पद पर प्रतिष्ठित करवाने के लिए सन् 1882 ई. के आरम्भ में, भाषा निर्धारण हेतु गठित हण्टर–आयोग को विभिन्न आर्यसमाजों के माध्यम से हस्ताक्षर–युक्त– ज्ञापन पत्र प्रेषित करवाने का भी स्तुत्य कार्य किया है। मुलतान आर्यसमाज के मन्त्री मास्टर दयाराम द्वारा भाषा–आयोग के सम्बन्ध में पत्र लिखे जाने पर स्वामी दयानन्द ने प्रत्युत्तर में 24 मार्च 1882 ई. को दयाराम को एक पत्र लिखा था कि, "यह बात बहुत उत्तम है क्योंकि अभी कलकत्ते में इस विषय में सभा हो रही है इसलिए जहाँ तक बने वहाँ तक शीघ्र संस्कृत और मध्यदेश की भाषा (हिन्दी) के प्रचार के वास्ते बहुत प्रधान पुरुषों की सही कराके कलकत्ते की सभा में भेज दीजिए और भेजवा दीजिए.......। इसी आशय का एक पत्र उन्होंने 14 अगस्त 1882 ई. को फर्रुखाबाद से लाला कालीचरणजी, रामचरणजी को भी लिखा। दयानन्द ने फर्रुखाबाद आर्यसमाज के स्तम्भ, बाबू दुर्गादासजी को 17 अगस्त सन् 1882 ई. को देश के विभिन्न हिस्सों से आर्यसमाजों द्वारा हण्टर–आयोग को स्मरण पत्र प्रेषित करवाने के सम्बन्ध में एक पत्र में निर्देश देते हुए लिखा था कि,.. यह काम एक के करने का नहीं है और अवसर चूके वह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ, तो आशा है कि मुख्य सुधार की नींव पड़ जावेगी। इन विभिन्न पत्रों से स्पष्ट हो जाता है कि दयानन्द ने हिन्दी को राज–भाषा–पद पर प्रतिष्ठापित करने हेतु महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

स्वामी दयानन्द के अथक प्रयासों के फलस्वरूप ही पेशावर, झेलम, लाहौर, शिमला, अमृतसर, मुम्बई, मुरादाबाद, मेरठ, कानपुर, बनारस आदि विभिन्न स्थानों से हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित कराने हेतु हण्टर–भाषा–आयोग को स्मरण पत्र प्रेषित किए गए। कानपुर से प्रेषित मेमोरियल के कॉलम तीन से यह ज्ञात होता है कि 02 दो लाख मनुष्यों के अनुमान से दो सौ मेमोरियल हण्टर–आयोग को भेजे गये थे। आर्यसमाज मेरठ द्वारा 20x26 अठपेजी आकार का 16 पृष्ठों में छपा हुआ मेमोरियल हण्टर–आयोग को प्रेषित किया गया, जिसमें हिन्दी के प्रयोग एवं देवनागरी लिपि में शिक्षा दिलाने की तर्कसम्मत ढंग से माँग की गई। इसी प्रकार कानपुर के निवासियों की ओर से सर एलफ्रेड कॉमिन्स, लेफ्टीनेण्ट गवर्नर, पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध–क्षेत्र को एक स्मरण–पत्र दिया गया, जिसमें भाषा आयोग के अध्यक्ष हण्टर साहब तथा जस्टिस महमूद द्वारा हिन्दी के पक्ष में प्रस्तुत विचारों का उल्लेख करते हुए आर्य–भाषा हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्थापित करने का इस प्रकार निवेदन किया गया था कि, जब शिक्षा कमीशन इलाहाबाद में मेयो हॉल में बैठी थी, तब प्रेसिडेण्ट ऑनरेबल डॉ. हण्टर साहब को कहना पड़ा था, कि हिन्दी की पश्चिमोत्तर प्रदेश में बड़ी चाह है। उसी समय जस्टिस सैय्यद महमूद ने भी कहा था–यद्यपि मैं मुसलमान हूँ, लेकिन यहाँ के लोगों की राय प्रकाश करता हूँ। यह सब लोग यही चाहते हैं कि हिन्दी सब जगह प्रचलित होवे और उर्दू, जो टेढ़ी–मेढ़ी लिखी जाती है, मेरी राय से न रहनी चाहिए.....। उपर्युक्त समस्त उद्धरणों से स्पष्ट हो जाता है कि स्वामी दयानन्द ने हिन्दी–हेतु जन–आन्दोलन छेड़ दिया था।

17. देशी रियासतों में हिन्दी प्रचार–ऋषि दयानन्द ने यह अनुभव किया था कि ब्रिटिश भारत की शिक्षानीति तथा भाषानीति अंग्रेज अधिकारियों द्वारा संचालित होती है, किन्तु जो देशी रियासतें हैं उनका आन्तरिक शासन वहाँ के हिन्दू राजाओं के अधीन है, अतः उनकी यह चेष्टा थी कि इन राजाओं को अपने राज्य में ऐसी प्रवृत्तियों को पनपाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए जिससे स्वदेशी भाषा एवं संस्कृति का संवर्धन हो सके। जब वे उदयपुर गए तो उन्होंने महाराणा सज्जनसिंह को प्रेरणा देकर मेवाड़ गजट का नामकरण 'सज्जन कीर्तिसुधाकर' (महाराणा सज्जनसिंह की कीर्ति को प्रकाशित करने वाला चन्द्रमा) किया तथा राजकीय महकमों के नाम भी संस्कृतनिष्ठ रखवाये। उदाहरणार्थ, जंगलात (फोरेस्ट) डिपार्टमेंट को 'शैलकान्तार सम्बन्धिनी सभा' का नाम दिया गया। उनकी निजी सेना को 'निज सैन्य सभा' कहा जाता था। जबकि वाणिज्य, उद्योग विभाग का नामकरण 'शिल्पसभा' हुआ। जोधपुर पहुँचकर स्वामीजी ने तत्कालीन नरेश महाराजा जसवन्तसिंह को जो प्रबोधात्मक पत्र लिखा उसमें राजकुमारों की शिक्षा को लेकर विशिष्ट निर्देश दिये गए थे। इस प्रसंग में उन्होंने नरेश को लिखा कि महाराजकुमार (सरदारसिंह) के सब संस्कार वेदोक्त करायें तथा उन्हें सर्वप्रथम देवनागरी (हिन्दी) तत्पश्चात् संस्कृत की सनातन विद्या पढ़ायें। हिन्दी विषयक स्वामीजी के उपदेशों को जोधपुर राज्य के मुख्य प्रशासक (मुसाहिब आला) तथा राजा के छोटे भाई महाराज प्रतापसिंह पर इतना प्रभाव पड़ा कि कुछ समय बाद उन्होंने अपने राज्य के कार्यालयों की राजभाषा हिन्दी (देवनागरी में लिखी जानेवाली) घोषित कर दी और उर्दू के चलन को समाप्त कर दिया।

18. युगप्रर्वत्तक ही नहीं युगपरिवर्तक भी–स्वामीजी के भाषण और लेखन से ही भारतेन्दु–युग के साहित्य–मनीषियों को प्रेरणा मिली। उस समय के सभी साहित्यिकों की रचनायें प्रायः समाज–सुधार और राष्ट्रीयता की भावना से ओत–प्रोत हैं। इस काल के समस्त वाङ्मय में मध्यकालीन रुढ़िवादी विचारधारा का नवीन प्रगतिशील सुधारवादी विचारधारा से संघर्ष परिलक्षित होता है। उस समय नवीन राष्ट्रभाषा हिन्दी और उसका वाङ्मय नये प्रगतिशील सुधारवादी विचारधारा को व्यक्त करने का साधन बना इसलिए हम ऋषि दयानन्द को युग प्रवर्त्तक के साथ–साथ युग–परिवर्त्तक भी मानते हैं।

इन सब बातों के साथ–साथ देश की शोचनीय आर्थिक परिस्थिति को दूर करने के लिए स्वामी दयानन्द ने गोरक्षा का महान् आन्दोलन किया। उनकी इच्छा थी कि भारत के तीन करोड़ नर नारियों के हस्ताक्षर कराकर महारानी विक्टोरिया की सेवा में एक शिष्ट–मण्डल भेजा जाए। इसके लिए उन्होंने लाखों व्यक्तियों के हस्ताक्षर कराये, जिनमें राजा से लेकर रङ्क तक सभी वर्ण के व्यक्ति थे। स्वामीजी की असामयिक मृत्यु से यद्यपि उनका यह कार्य पूर्ण न हो सका, तथापि जनता में इसके लिए महती जागृति उत्पन्न हो गई। इसी प्रकार वे एतद् देशवासियों की निर्धनता को दूर करने के लिए भारतीय व्यक्तियों को जर्मनी आदि कला–कौशल प्रवीण देशों में औद्योगिक शिक्षा दिलाने का भी प्रयत्न कर रहे थे। उन्होंने वेदभाष्य में स्थान–स्थान पर यन्त्रों को उपयोग में लाने और उनके द्वारा सम्पत्ति बढ़ाने का उल्लेख किया है। इस प्रकार ऋषि दयानन्द ने साम्राज्यवादी शोषण व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष के लिए राष्ट्र को चैतन्य करने का महान् प्रयत्न किया। इस प्रकार हम यह देखते है कि ऋषि दयानन्द अपने युग की असाधारण विभूति थे। उन्होंने इस प्राचीन देश के पिछड़े हुए जनसमाज को चहुँमुखी प्रगति के पथ पर अग्रसर करने का महान् ऐतिहासिक कार्य किया।

अन्त में हम ऋषि दयानन्द के प्रति हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री द्वारा दी गई श्रद्धांजलि के शब्दों को उद्धृत कर इस शोध विनिबन्ध को समाप्त करते हैं–"तीस करोड़ नामर्दों में जो अकेला मर्द होकर जन्मा, बरसाती घास–फूस और मच्छरों की तरह फैले हुए मनुष्य जन्तु की मूर्खता की चरम सीमा के प्रामाणस्वरूप मत–मतान्तरों को जिसने मर्दानगी से विश्व विध्वंसिनी ज्वाला की तरह विध्वंस किया, मरे हुए हिन्दू धर्म को अपने जादू के चमत्कार से जीवित कर दिया और उसे नोंच–नोंच कर खानेवाले गीदड़ों को एक ही हुंकार से जिसने भगा दिया। कीड़े–मकोड़ों की तरह रेंगकर पलने वाले हिन्दू बच्चों के लिए जिसने पुण्यधाम गुरुकुलों और अनाथालायों की रचना की। निर्दयी हिन्दुओं की आँखों के सामने डकराती, गर्दन कटाती गायों के आँसू जिसने अग्नि के नेत्रों की तरह देखे, अबला विधवाओं के ऊपर जिसने संजीवनी मरहम लगाया, जो करोड़ों व्यभिचारियों में अकेला अखण्ड ब्रह्मचारी था, जिसके प्रकाण्ड पाण्डित्य ने नदियाँ (नवद्वीप) और काशी की पुरानी ईंटों को हिला दिया, सारी पृथ्वी पर जिसकी आवाज गूँज गई थी, युग के देवता की तरह जिसने वेदों का उद्धार किया, जो प्रत्येक हिन्दू के दरवाजे पर निरन्तर 59 वर्ष तक ऊँची आवाज में पुकारता रहा 'उठो, जागो, निर्भय रहो, खड़े हो' और सच्चे सिपाही की तरह घाव खाकर जिसने बीच रणक्षेत्र में प्राणों का विसर्जन किया, वह दयानन्द था।"

–आचार्य चतुरसेन शास्त्री

(आर्यमित्र का 'दयानन्द जन्म शताब्दी' अंक, 1925 ई.)

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड, अमेठी, (उत्तरी–प्रदेश)–227405

गतांक से आगे...

ईश्वर विचार

● **गंगाप्रसाद उपाध्याय**

सुसंगठित समाज के लिए कई चीजों की आवश्यकता होती है। जैसे धन, कृषि, उद्योग, कला–कौशल, व्यापार, यात्रा के साधन, सेना, विद्याध्ययन आदि। वेदों में इन सब विषयों पर शिक्षाएँ विद्यमान हैं।

धन–

प्रश्न–वेद में धन के सम्बन्ध में क्या शिक्षा है ?

उत्तर–ऋग्वेद के आरम्भ में ही एक मन्त्र धन के सम्बन्ध में है क्योंकि बिना धन के तो जीवन नहीं हो सकता।

अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवे दिवे। यशसं वीरवत्तमम्।।

ऋग्वेद 1.1.3

(अग्निना) ईश्वर के उपदेशों के द्वारा, **(रयिम्)** धन को, **(अश्नवत्)** प्राप्त करे, **(दिवे दिवे)** हर रोज। वह धन कैसा हो ? **(पोषम्)** पुष्टि देने वाला, **(यशसम्)** कीर्ति देने वाला **(वीरवत्तमम्)** शक्ति बढ़ाने वाला।

तात्पर्य यह है कि बेईमानी से धन मत कमाओ। ईश्वर की आज्ञा में रहकर धर्म से धन कमाओ। ऐसा धन न हो कि तुम्हारा पालन पोषण न हो सके। ऐसा भी धन न हो कि लोग तुम को गालियाँ दें। धन से तुम्हारी कीर्ति बढ़नी चाहिये। धर्म से कमाओ और धर्म से ख़र्च करो। वेद में लिखा है–

ऊर्जं बिभ्रद् वसुवनिः सुमेधा
अघोरेण चक्षुषा मित्रियेण।
गृहानैमि सुमना वन्दमानो
रमध्वं मा बिभीत मत्।।

अथर्ववेद 7.60.1

एक गृहस्थी अपने परिवार वालों से कहता है–

(सुमना वन्दमानो रमध्वं) आप अपने मनों को ठीक रखते हुए और एक दूसरे की वन्दना करते हुए आनन्द कीजिये, (मा बिभीत मत्) मुझ से मत डरिये। मैं स्वार्थी बनकर आपको कष्ट न दूँगा क्योंकि मैं, **(ऊर्जं बिभ्रत्)** तेज को धारण करता हूँ, **(वसुवनिः)** धन कमाता हूँ, **(सुमेधा)** बुद्धि वाला हूँ, मेरी नीयत ख़राब नहीं है, **(अघोरेण मित्रियेण चक्षुषा गृहान् ऐमि)** कोमल मित्र की आँख से मैं घर में आता हूँ अर्थात् मैं प्रेम से रहूँगा। धन कमाऊँगा और आप सब को सुख दूँगा। जो दुष्ट और स्वार्थी हैं वे तो कमाते हैं अपने ही ऊपर खर्च कर देते हैं।

इमे गृहा मयोभुव ऊर्जस्वन्तः पयस्वन्तः।
पूर्णा वामेन तिष्ठन्तस्ते नो जानन्त्वायतः।।

अथर्ववेद 7.60.2

ये घर सुखी और शक्ति वाले तथा दूध वाले हों, भरपूर हों, उत्तम वस्तुएँ इनमें हों और उदार ह्रदय लोग हमारा स्वागत करें। जो लोग परिश्रमी उदार और प्रेम युक्त होते हैं उन्हीं के घर धन–धान्य, दूध–दही से भरपूर होते हैं और उन्हीं को सुख होता है। कृपण, कंजूस और आलसी कभी फूलते फलते नहीं।

उपहूता भूरिधनाः सखायः स्वादुसंमुदः।
अक्षुध्या अतृष्या स्त गृहा मास्मद् बिभीतन।।

अथर्ववेद 7.60.4

(भूरिधनाः) बहुत धन कमाने वाले, **(सखायः)** साथ–साथ ईश्वर की स्तुति करने वाले, **(स्वादुसंमुदः)** जीवन का आनन्द लेने वाले **(अक्षुध्या)** भूखा न मरने वाले **(अतृष्णा)** प्यास से न तड़पने वाले, **(गृहा स्त)** घरवालो तुम रहो, (मा अस्मद् बिभीतन) हमसे डरो मत।

यदि धनी आदमी धर्मात्मा या दानी हो तो घर के, मुहल्ले के नगर के और देश के लोग उसका मान करते हैं।

पति जब विवाह करता है तो प्रतिज्ञा करता है कि मैं पत्नी का पालन करुँगा। जो पति यह आशा रखता है कि पत्नी भी मिले और वह विवाह के साथ बहुत सा धन, धान्य, कपड़े, आभूषण, गाड़ी मोटर, वाहन, भाँडे भी लावे उनके विरुद्ध अथर्ववेद में एक मार्मिक भर्त्सना है–

अश्लीला तनूर्भवति रुशती पापयामुया।
पतिर्यद् वध्वोः वाससः स्वमङ्गमभ्यर्णुते।।

अथर्ववेद 14.1.27

जो पति अपनी वधू के वस्त्रों से अपने अंगों को ढकता है अर्थात् वधू के द्वारा लाये हुए सामान के उपभोग की इच्छा करता है उसका शरीर अश्लील या दूषित हो जाता है अतः दहेज लेने या उसको चाहने की प्रथा को वेद ने पाप बताया है।

समस्त शुद्धियों में अर्थ–शुचिता (ईमानदारी) सब से श्रेष्ठ और आवश्यक है। ऋग्वेद का यह मन्त्र देखिये–

शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां
शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः।
ऋतेन सत्यमृतसाप
आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः।।

ऋग्वेद 7.56.12

(मरुतः) हे संसार के लोगो **(वः शुचीनां)** तुम शुद्ध लोगों के **(शुची हव्या)** सामान 'चीजें' शुद्ध हों **(शुचिभ्यः शुचिम् अध्वरं हिनोमि)** मेरी प्रेरणा है कि तुम शुद्ध धर्म से कमाये हुए शुद्ध पदार्थों के साथ शुद्ध यज्ञ करो। शुद्ध सत्य और शुद्ध वैदिक नियमों के द्वारा तुम्हारे जीवन शुद्ध और दूसरों को शुद्ध करने वाले बनें। रिश्वत लेना, जुआ खेलना, बेईमानी करना किसी का माल छीन लेना यह सब अधर्म की कमाई है और यह घरों और देशों को नष्ट कर देती है।

पशुधन–

धनों में सब से उत्कृष्ट 'पशुधन' है। अथर्ववेद के सत्रहवें काण्ड सूक्त 1 में इस प्रार्थना को 15 बार दुहराया गया है–

त्वं नः पृणीहि पशुभिर्विश्वरूपैः सुधायां मा। धेहि परमे व्योमन्।।

{यह विनय इस सूक्त के मन्त्र संख्या 6 से चौबीसवें तक पन्द्रह बार की गई है। 'जिज्ञासु'}

हे परमात्मन् **(त्वं)** आप, **(नः)** हम को, **(विश्वरूपैः पशुभिः)** नाना प्रकार के पशुओं से प्रसन्न कीजिये, **(परमे व्योमन्)** इस विशाल जगत् में **(मा–माम्)** मुझको, **(सुधायां)** अमृत में, **(धेहि)** रखिये, अर्थात् अनेक पशुओं को देकर मुझ को सुखी बनाइये।

पशुओं की उत्पत्ति का यह वर्णन है–

तस्मादश्वा अजायन्त ये च के
चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्
जाता अजावयः।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या
ग्राम्याश्च ये।

अथर्ववेद 19.6.12,14

उसी ईश्वर ने घोड़ों को बनाया और उन पशुओं को जो दो दाँत वाले हैं। गायों, बकरियों और भेड़ों को बनाया, उसी ईश्वर ने वायु में विचरने वाले, वन में फिरने वाले तथा ग्राम में रहने वाले पशुओं को बनाया।

मनुष्यों के साथ पशुओं का साथ है **{पशुओं, पक्षियों, कीड़ों, मकोड़ों व जलचरों की अन्धाधुन्ध हत्या से इस धरती पर मानव जीवन के लिए एक भयङ्कर सङ्कट खड़ा हो गया है। अब सारे वैज्ञानिक लुप्त हो रहे जीव जन्तुओं व वनस्पतियों की रक्षा के लिए यत्नशील हैं। घड़ियालों, सिंहों, बाघों, कछुओं तक की चिन्ता की जा रही है। वेद के सिद्धान्त समझ में आ रहे हैं। 'जिज्ञासु'}** पशुओं में भी वही जीवात्मा है जो मनुष्यों में। इस प्रकार जीव की दृष्टि से सब प्राणी एक हैं इसलिए कहा है कि **"मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे"** (यजु. 36.18) अर्थात् हम सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखें। मनुष्यों के घरों में जो घोड़े, गधे, गाय, बैल, भेड़, बकरी, कुत्ते पाले जाते हैं वे केवल मनुष्य की सेवा ही नहीं करते अपितु अपनी संस्कृति का स्तर भी ऊँचा करते हैं। युद्ध के घोड़े स्वामी भक्त बन जाते हैं और स्वामी की रक्षा के लिए अपने प्राण दे देते हैं। गड़रियों के कुत्तों की बुद्धि इतनी तीव्र हो जाती है कि वे भेड़ों की रखवाली कर सकते हैं। दक्षिणी अफ्रीका में किम्बर्ले (Kimberley) नामक एक नगर है जहाँ खानों में से हीरे निकाले जाते हैं। हीरों की रखवाली के लिए कुत्तों को शिक्षा दी जाती है। **चौकीदार को चोर प्रलोभन दे सकते हैं परन्तु कुत्तों को नहीं। सारांश यह है कि मनुष्य और पशुओं का संसर्ग दोनों के लिए लाभकर है।** मनुष्य को अपने कामकाज में सहायता मिलती है और पशुओं की आन्तरिक उन्नति का विकास होता है। इसीलिए यजुर्वेद के पहले मन्त्र में प्रार्थना है–**'यजमानस्य पशून् पाहि'** यजमान के पशुओं की रक्षा कर। क्योंकि पशु धन है। जैव श्रेष्ठ धन है। बिना पशुओं के आप यन्त्रों (कलों) से काम चला सकते हैं परन्तु जो सभ्यता जड़ यन्त्रों पर ही निर्भर रहती है और पशुओं की उपेक्षा करती है, वह कितनी ही चमकीली और सुविधाजनक क्यों न हो उसमें सब से बड़ा दोष यह है कि वह पशुओं के विकास का अवसर नहीं देती इसलिए पशुधन की उपेक्षा ठीक नहीं।

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः।।

सामवेद 1.1.2

हे परमात्मन् **(नः पवस्व)** हम को ऐसी प्रेरणा कीजिये कि **(गवे शम्)** हम गायों के प्रति शुभकारी हों, **(शं जनाय)** अपने नौकर चाकरों के प्रति शुभकारी हों, **(शम् ओषधीभ्यः)** वृक्षों, लताओं, पौधों की भी उन्नति करें।

इस मन्त्र में गाय और घोड़े का

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

शिवरात्रि और आर्य समाज

● डॉ. महेश विद्यालंकार

पर्व हमारी सांस्कृतिक चेतना के अभिन्न अंग हैं। पर्वों से जीवन में उल्लास, उत्साह, गति, संगति चेतना एवं प्रेरणा मिलती है, परस्पर संगठन की भावना जागृत होती है। पर्व जीवन्त चेतना के प्रतीक हैं। भारतीय संस्कृति पर्वों से भरी–पूरी है। ऋतुओं, फसलों, महापुरुषों, धर्म गुरुओं, तीर्थों और विशेष घटनाओं के साथ पर्वों का गहरा सम्बन्ध है इसीलिए भारतीय जन–मानस पर्वों के आगमन की प्रतीक्षा में उत्सुक रहता है।

शिवरात्रि भारत का महान् पर्व है। इसका सम्बन्ध शिवजी की उपासना, व्रत एवं संकल्प से है। सभी धार्मिक आस्था वाले इसको किसी न किसी रूप में महत्व देते हैं। इसी दिन देवात्मा दयानन्द को आत्मबोध हुआ था। हृदय में सत्य ज्ञान और धर्म के प्रकाश का उदय हुआ था। जीवन परिवर्तन की ओर मुड़ गया था इसलिए आर्यसमाज का शिवरात्रि के साथ विशेष एवं गहरा सम्बन्ध है। आर्य समाज के इतिहास में यह दिन सदैव स्मरणीय एवं वंदनीय रहेगा। यह तिथि ही आर्यसमाज के निर्माण का शुभारम्भ है अतः आर्यसमाज के लिए यह दिन बोधोत्सव है, ज्ञान पर्व है, ज्योति और प्रकाश का महोत्सव है, जीवन परिवर्तन का अवसर है, व्रत और संकल्प का प्रभात है, निर्माण और चेतना की मङ्गल वेला है। इसी पुण्य तिथि पर महामानव दयानन्द के हृदय में सत्य का तूफान उठा था। सारी रात श्रद्धा, आस्था तथा निष्ठा से भरा हुआ बालक मूलशंकर सच्चे शिव के दर्शन के लिए एकटक लगाए हुए जागता रहा है जबकि सारा मन्दिर निद्रा की गोद में था। इसी समय एक विचित्र घटना घटित हुई, चूहा शिवजी के नैवेध को निडर होकर खा रहा है। उस बालक का विश्वास, आस्था एवं श्रद्धा खण्डित हो उठी। मन नाना प्रकार के संशयों में डूब गया, अनेक प्रश्न उभरने लगे। शिवरात्रि का व्रत तोड़ दिया। यह सच्चा शिव नहीं हो सकता है जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा नहीं कर पा रहा है यह हमारी क्या रक्षा करेगा ? बालक सच्चे शिव के दर्शन और प्राप्ति के लिए निकल पड़ा। अन्ततः सच्चे शिव जी की खोज में रत हो गए। इसी मूल घटना ने मूल शंकर को महर्षि दयानन्द के नाम से इतिहास और संसार में प्रसिद्ध कर दिया।

आर्य समाज की नीति, उद्देश्य, विचारधारा, मान्यताएँ, दर्शन, चिन्तन सभी के आधार वैदिक विचारधारा पर आधारित हैं जो सत्य, धर्म, तर्क एवं बुद्धि संगत है। इसमें अन्धविश्वास, पाखण्ड, झूठ, मन्त्र, तन्त्र, एवम् रूढ़िवादिता आदि नहीं है। यह तो सत्य सनातन वैदिक परम्परा का ही प्रचारक और प्रसारक रहा है। इसी कारण आर्यसमाज पन्थ, मजहब, सम्प्रदाय आदि नहीं है यह तो एक जीवन्त क्रान्ति है, आंदोलन है, जीवन पद्धति है, सुधारक विन्तन है। इसमें किसी देवदूत, पैगम्बर और अवतार का स्थान नहीं है, इसमें ऐकेश्वरवाद की पूजा है। परमात्मा एक है, वह तीनों कालो में विद्यमान रहता है। वह जन्म–मरण, सुख–दुःख आदि सांसारिक बातों से पृथक है। उसके गुण–कर्म–स्वभाव के कारण सविता, विष्णु, रुद्र, गणेश आदि अनेक नाम हैं। जैसे व्यक्ति एक होता है वह किसी का पुत्र है, किसी का पिता है, किसी का पति है, तो किसी का भाई है। गुण, कर्म, स्वभाव से इसके कई रूप हैं। ऐसे ही परमात्मा भी अनेक रूपों वाला है। उसका एक नाम शिव भी है। शिव का अर्थ है जो सदैव मङ्गल और कल्याण करता है। ये दोनों गुण उस परमात्मा में सदैव रहते हैं अतः वह घट–घट व्यापी परमात्मा ही सच्चा शिव है। उसी को पूजा–उपासना और साधना करनी चाहिए।

आज सत्य और इतिहास ओझल हो गया है। अन्धविश्वास और रूढ़ियों की पूजा होने लगी है। धर्मग्रन्थ, पुराण एवम् इतिहास साक्षी है–कि प्राचीन काल में यहाँ नागजाति का राज्य रहा है। नागजाति के गणपति शंकर जी थे। नागजाति शिव जी का चिह्न अपने मुकुट पर लगाती थी। नागजाति ने राष्ट्र का सर्वोच्च रक्षक शिव जी को मान कर उनके नाम के अनेक मन्दिर स्थापित किये थे। शिव जी का सम्बन्ध नागजाति से था। आज हमने नाग का अर्थ सर्प कर के शिव जी के गले में सर्पों की माला पहना दी। शिव जी का लिंग अर्थात् चिह्न त्रिशूल था। नागजाति ने त्रिशूल रूपी चिह्न को अपने राज्य की ध्वजा घोषित किया था। आज भी प्रत्येक अपनी अलग–अलग ध्वजाएँ हैं। हमसे अर्थ का अनर्थ करके लिंग का अर्थ शिश्न लगाया जो कि तर्क संगत नहीं है। यह इतिहास के अनुसन्धान का विषय है। आर्यसमाज ऐसे अनेक सत्य तथ्यों तक सबको बताना और पहुँचाना चाहता है।

आर्यसमाज राष्ट्र, समाज, जाति और जीवन में व्याप्त अनेक बुराइयों, सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों एवम् पाखण्डों को हटाना और मिटाना चाहता है। आज मन्दिर अपने वास्तविक स्वरूप से हटते जा रहे हैं। जो स्थान धार्मिक, सात्विक, सर्वहितकारी, शान्त, प्रेम, दया, सेवा आदि के स्थल होने चाहिए वहाँ हिंसा लूट–पाट, धार्मिकता, लड़ाई–झगड़े आदि हो रहे हैं। अनहोनी घटनाएँ हो रही हैं। मानव की प्रवृत्तियाँ पशुता की ओर जा रही हैं। मानवीय मूल्य बड़ी तेजी से बदले और तोड़े जा रहे हैं। ऐसे विकट समय आवश्यकता है हिन्दू जाति को अपने गौरवमय इतिहास से संस्कृति से, आदर्शग्रन्थों से महापुरुषों से, इतिहास के से शिक्षा तथा प्रेरणा लेनी चाहिए।

महर्षि के जीवन में शिवरात्रि की रात की खोज और जीवन परिवर्तनका कारण बन गई थी। इससे पूर्व कितनी शिवरात्रियाँ आई होंगी ? ओज भी आ रही हैं ? कहीं कार्य नजर नहीं आता है। कोई भी मूल सत्य तक नहीं पहुँच सका है। यह उस महाभाग की गहन चेतना और पकड़ का ही नाम है कि उसने शंकर के मूल को खोज निकाला। ऋषि महान शिक्षक और उद्धारक थे। उन्होंने संसार के लोगों को अन्धकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर धर्म से अधर्म की ओर, मृत्यु से अमरता का मार्ग दिखाया। भारत की वैदिक कालीन गौरव, आदर्श और सम्मान से देखने का स्वप्न लेकर आए थे। वे मनु के इस कथन को साकार करना चाहते थे–

एतद्देशभूतस्य सकाशादजन्मनः स्वं स्वं चरित्र शिक्षरेन् पृथिव्यां समानवा।।

समग्र वमुधा के लोगों ! भारतभूमि की शरण में आओ। यहाँ से जीवन और चरित्र के लिए उन्नत शिक्षा ग्रहण करो। इसी में तुम्हारा कल्याण सम्भव है।

उस महायोगी का वेद, धर्म, संस्कृति, शिक्षा, नारी उद्धार, शुद्धि एवम् राष्ट्रीय एकता आदि प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण एवम् स्मरणीय योगदान रहा है। उन्होंने जीवन में कभी भी गलत बातों के लिए समझौता नहीं किया था, वे सत्य के पोषक थे। सत्यमय जीवन जिया। सत्य के लिए ही हँसते–हँसते जहर पी गए। कवि के शब्दों में सदियों तक इतिहास स्मरण करेगा। तुम मानव थे या मानवता के महाकाव्य।

मो. 9810305288

☞ पृष्ठ 03 का शेष

शिवरात्रिः कल्याण...

व्यवस्था का पालन कर रहे थे और न आश्रम व्यवस्था का निराकर ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वज्ञता का उपदेश देने वाले झूठ बोलने से लेकर छल–कपट गुटबाजी जैसे पाप भी सहज भाव से बिना किसी अपराध–बोध के कर रहे थे! जो मेरे पक्ष का नहीं है, वह न तो सच बोलता है और न सम्मान का पात्र है। यह सोच हमें इतिहास में उपहास का ही नहीं कल भी सताएगी। आज हम जीवित है, तब हमारे पास इस छोटे–से प्रश्न का उत्तर नहीं है कि पंच महायज्ञों का पालन करना किसके लिए है? महर्षि दयानन्द ने वेदों का पढ़ना– पढ़ाना और सुनना–सुनाना किन आर्यों का परम् धर्म घोषित किया है? है कोई उत्तर हमारे पास? संसार का उपकार करना किस आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है? सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझने की सीख और सामाजिक सर्वहितकारी नियमों के पालन करने की बाध्यता का आदेश ऋषि दयानन्द ने किसके लिए दिया था ? है कोई उत्तर हमारे पास ? आज हम आर्य कहलाने वाले जीवित हैं, तब इन प्रश्नों पर हमारा मुँह नहीं खुल पा रहा। कल जब हमारे बाद इतिहास ये प्रश्न पूछेगा तो ये प्रश्न हमारे अस्तित्व को सदा के लिए लाञ्छित करते रहेंगे। यही है–अबोध! शब्दवित होकर सन्तुष्ट हो जाना ही अबोध है और आत्मावित होने के लिए स्वयं को समर्पित कर देना ही बोध का बीज है।

ये शिवरात्रि, ये बोधपर्व, हम आर्यों के लिए सच्ची शिवरात्रि बने, कल्याण की रात्रि बने, इसके लिए बोध होना आवश्यक है। बोध क्या है– पढ़–सुनकर जो सत्य प्रतीत हो, तर्कों, युक्तियों व प्रमाणों से जो सत्य सिद्ध हो, उसे जीवन का अंग बना लेने के लिए हृदय का अधीर हो जाना ही बोध है, यही बोध कल्याण की आधार शिक्षा है!

बुद्धि से सच–झूठ का,
नित्य कीजिये शोध।
हृदय से स्वीकारना,
ही है सच्चा बोध।।

गाँव–सूरौता, भरतपुर (राज.)

गतांक से आगे...

प्राचीन विश्वासों पर वेदों का प्रभाव

● इन्द्रविद्यावाचस्पति

चीन और मिश्र

हम यह सिद्ध नहीं करना चाहते कि संसार में जितने मत, सम्प्रदाय या धर्म उत्पन्न हुए हैं, उन सबकी प्रत्येक बात वेद से ली गयी है। यह न केवल उपहास्य है, वरन असम्भव भी है। न हम यह बताना चाहते हैं कि मनुष्य बुद्धि ने अभी तक धर्म के क्षेत्र में कोई नया आविष्कार नहीं किया। मनुष्य के दिमाग ने पहले विद्यमान मसाले के आधार पर बहुत–सी धार्मिक और आत्मिक सचाइयाँ ढूँढ़ी हैं। यहाँ यह दिखाना अभिप्रेत है कि कई मार्गों से होते हुए वेदों के विचार प्रायः मनुष्य जाति के हरेक भाग में पहुँच चुके हैं और अपना प्रभाव उत्पन्न कर चुके हैं। मूल स्रोत के नाले और नालियों का जल बड़े–बड़े मतमतान्तरों की नदियों से मिल कर उन पर प्रभाव उत्पन्न करने का काम कर चुका है। जो धर्म सीधे वेदों से उत्पन्न हुए, उनकी चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं; एक बौद्ध धर्म रहा है, जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। यहाँ उन मतों और विश्वासों के बारे में कुछ कहना है जो वैदिक धर्म से उत्पन्न नहीं, केवल प्रभावित हुए हैं। प्राचीन धर्मों में कई बातें इतनी समान पायी जाती हैं कि उनकी सत्ता आकस्मिक नहीं हो सकती। प्रतीत होता है कि अवश्य ही किसी समय इन सब जातियों का परस्पर सामीप्य तथा मेल–जोल रहा होगा और जो धर्म प्राचीन था उससे शेष सब प्रभावित हुए होंगे। प्रत्येक धर्म की वैदिक धर्म के साथ जो समानताएँ हैं, उन्हें दिखाने के लिए यह स्थान उचित नहीं है। यहां तो हमें केवल धार्मिक विचारों का विकास और विस्तार देखना है। उसके लिए समानताओं का दिग्दर्शनमात्र पर्याप्त है।

चीन का प्राचीन धर्म

जब हम चीन के प्राचीन सिद्धान्तों पर दृष्टि डालते हैं तो हमें भारत के प्राचीन धार्मिक विचारों के साथ अपूर्व समानता दिखाई देती है। चीन की, ईसा से 2514 वर्ष पूर्व की धार्मिक अवस्था पर दृष्टि डालते हैं तो हमें दिखाई देता है कि वहाँ के लोग परमात्मा को पिता और पृथ्वी को माता मान कर पूजते थे। परमात्मा धर्म और अधर्म का अच्छा और बुरा फल देने वाला था। **सबसे बड़ी बात यह है कि उस समय के चीन के धार्मिक विचारों में शैतान या नरक के लिए कोई स्थान नहीं था।** चीन के प्राचीन धर्म का वृत्तान्त देते हुए प्रो. हर्बर्ट ए. गाइल्स अपनी 'Religions of Ancient China' नामक पुस्तक में लिखते हैं–

"In this Primitive Monothiesm, of which only scanty, but no doubt genuine records remain, no place was found for any being such as the Budhist Mara or Devil of the OldAnd New Testaments.

'इस प्राचीन एकेश्वरवाद में, जिसके बहुत कम परन्तु असली सबूत मिलते हैं, बौद्धों के मार या पुराने या नए अहदनामे के शैतान के लिए कोई स्थान नहीं है।'

प्राचीन वैदिक विचारों में हम यह एक बड़ी विशेषता देखते हैं कि बुराई के पैदा होने के लिए किसी जुदा शैतान की आवश्यकता नहीं समझी गयी। **परमात्मा ही भलाई और बुराई का फलदाता है।** कर्म करने वाला जीव है। वेद एक ही शक्ति को स्वीकार करते हैं। ऋग्वेद कहता है, **"एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति।"** चीन के विश्वासों के विषय में प्रो. हर्बर्ट अपने 'Ancient History of China' नामक ग्रन्थ में लिखते हैं, 'From records of Su King we are bound to admit that the ancient Chinese were decided monotheists.'

प्राचीन सू किंग के लेखों से मानना पड़ता है कि चीन के प्राचीन निवासी निश्चित रूप से एकेश्वरवादी थे।

विश्वासों को छोड़कर अब हम यज्ञों की ओर आते हैं। यज्ञों के सम्बन्ध में हमें चीन और भारत में अपूर्व समानता दिखायी देती है। चीन के यज्ञ का डॉ. लैग (Dr. Legge) ने निम्नलिखित शब्दों में वर्णन किया है–

"The 'ceremonies and the sacrifices' were preceded by fasting and various purifications of the part of the King and the parties who were to assist in the peformances of them."

"Libations of fragrant spirit were made to attract spirits and their presence was invoked by a functionary who took his place inside the principal gate."

"यज्ञों से पूर्व व्रत और अनेक प्रकार की शुद्धियों का करना राजा और उसके पुराहितों के लिए आवश्यक होता था। सुगन्धित रसों की आहुति दी जाती थी, ताकि देवता बुलाये जा सकें, और उनका आह्वान करने का काम एक कार्यकर्ता करता था, जो मुख्य द्वार के अन्दर की ओर खड़ा होता था।"

हम दोनों यज्ञों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि दोनों परस्पर बिलकुल असम्बद्ध नहीं हैं।

"यज्ञों से पूर्व व्रत और अनेक प्रकार की शुद्धियों का करना राजा और उसके पुराहितों के लिए आवश्यक होता था। सुगन्धित रसों की आहुति दी जाती थी, ताकि देवता बुलाये जा सकें, और उनका आह्वान करने का काम एक कार्यकर्ता करता था, जो मुख्य द्वार के अन्दर की ओर खड़ा होता था।"

हम दोनों यज्ञों के विस्तृत वर्णनों को पढ़कर इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि दोनों परस्पर बिलकुल असम्बद्ध नहीं हैं।

भारतवर्ष के अत्यन्त प्राचीन नहीं, परन्तु मध्यकाल के बहुत–से विश्वासों का चीन के उस समय के विचारों से बहुत सा सम्बन्ध प्रतीत होता है। चीन में मध्यकाल में हम यज्ञों के साथ वृषभ के बलिदान का वर्णन पढ़ते हैं। मरे हुए बुजुर्गों के जीवित रहने का विचार बहुत पुराना था। उसके साथ धीरे–धीरे हम मृतकों के श्राद्ध की प्रथा को भी चलता हुआ पाते हैं। डॉ. लैग 'सू किंग' के अनुवाद में लिखते हैं–

"A belief in the continued existence of the dead in a spirit state and in the duty of their descendants to maintain by religious worship a connection with them] have been characteristics of the Chinese people from their first appearance in history."

"इतिहास के प्रारम्भ से ही हम देखते हैं कि चीनी लोग अपने मृतकों के सूक्ष्म रूप में रहने, और सन्तानों के धार्मिक पूजा द्वारा उनके साथ सम्बन्ध स्थिर रखने में विश्वास रखते थे।"

यही विशेषता हमारे मध्यकाल के विचारों में पायी जाती है। यदि विचारों की पद्धति पर ध्यान दें तब भी हमें कुछ कम समानता दिखाई नहीं देती। प्रो. विनयकुमार सरकार ने इस विषय को अपनी 'Chinese Religion through Hindu Eyes' नाम की पुस्तक में बड़ी योग्यता से प्रतिपादित करते हुए बताया है कि चीन का धार्मिक विचार–प्रवाह प्रायः उसी प्रकार चला है जैसे भारतीय धार्मिक विचार प्रवाह। यह समानता किसी सम्बन्ध के बिना नहीं हो सकती। यह अनुमान करना उचित नहीं प्रतीत होता है कि इतना सादृश्य और स्थान में इतनी समीपता रहते भी भारत ने चीन पर कोई प्रभाव नहीं डाला। चीन के धार्मिक विचार समय की दृष्टि से अर्वाचीन हैं। चीन के प्राचीन लेखकों के कथनानुसार वहाँ का धार्मिक विकास ईसा से 2953 वर्ष से पूर्व के लगभग प्रारम्भ होता है। उस समय फूसी (Fushi) नामक राजा ने यज्ञ और पूजा का संगठन किया था। ऋग्वेद का प्रारम्भ समय आजकल के यूरोपियन विद्वानों के मत में भी इससे बहुत पुराना है। इस कारण यह कल्पना निर्मूल नहीं है कि चीन के प्राचीनतम विचारों पर भी वेदों के विचारों का प्रभाव विद्यमान था।

क्रमशः

'आर्यसमाज का इतिहास (प्रथम भाग)' से साभार

गतांक से आगे...

अष्टम रश्मिः

● आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार

{आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार द्वारा रचित 'वैदिक रश्मियाँ' पुस्तक में पाँच भागों में वैदिक मंत्रों की सूक्तियों तथा मंत्रों की अत्यन्त सरस व्याख्यायें उपलब्ध हैं। तीसरे भाग में यजुर्वेद की सूक्तियों पर चर्चा की गई है। प्रथम मंत्र की पाँच सूक्तियों पर प्रकाश डाला गया है। पाठकों के लिए प्रस्तुत है प्रथम रश्मि–सम्पादक}

वास्तव में स्वसा कहते हैं बहन को जिसका कि अर्थ होता है–**"सु–सुष्टुतया (असु–क्षेपणे) अस्यते क्षिप्यते–स्नेहपूर्वकं प्रदीयते परकुलेषु वा या सा स्वसा।"** अर्थात् अच्छी तरह से पाल–पोस कर मर्यादा पूर्वक दूसरे कुलों में प्रदान किया जाता है, जिससे वह स्वसा कहलाती है। यदि एक बेटी ऐसी है जिसके माता–पिता वा पिता कभी नहीं रहते, तो पिता के अभाव में उसका पितृ तुल्य बड़ा भाई वा मातृ तुल्य बड़ी बहिन उसको स्नेह– लाड पूर्वक अपनी सन्तति सम पढ़ा–लिखा कर उसके हाथ पीले कर के उसका अच्छे घर–परिवार में विवाह कर देते हैं।

इस प्रकार माता, पिता, भ्राता आदि के विषय में बहुत कुछ सोचने–विचारने पर भी हर बेटी, हर पुत्री वा हर स्वसा, हर बहिन अपने–अपने कर्मों के अनुसार ही अगले घर–परिवार को प्राप्त होती है। एक बहिन एक घर–परिवार में जाकर अपने पितृ–कुल से बढ़कर बहुत धन–वैभव, और बहुत सुख–सौभाग्य से सम्पन्न हो जाती है और दूसरी अपने कर्मानुसार किसी ऐसे घर–परिवार में चली जाती है जहाँ कि जीवन निर्वाह ही बड़ी कठिनाई से होता है, तो ऐसी अवस्था में भी बहिन बहिन से द्वेष न करे, अप्रीति न करे, ईर्ष्या न करे, घृणा न करे, नफरत न करे। वह यही सोचे कि उसको अपने कर्मों के अनुसार ही ऐसा सुयोग्य वर मिला, अच्छा धन–वैभव, सुख–सौभाग्य से सम्पन्न परिवार मिला और मुझे जो यह घर–परिवार वा गुज़ारा मात्र जिसमें चल सके, ऐसा घर मिला, यह भी अपने पिछले ही कर्मानुसार मुझे मिला है। फिर भी वह मेरी बहिन है, अगर वह मेरे से निम्न स्थिति में है तो मैं उससे घृण ाा न करूँ, वरन् उससे और भी बढ़कर प्यार करूँ, उसकी कठिनाईयों में दिल से उसके साथ स्नेह–सहानुभूति और सहयोग करूँ और अगर वह उच्चावस्था में है, धन–वैभव से सम्पन्न है, उसके पुत्र ही पुत्र हैं, मेरी केवल लड़कियाँ ही लड़कियाँ हैं वह बड़े मज़े में है, तो भी मैं उससे ईर्ष्या न करूँ, उससे डाह न करूँ, उसके धन– वैभव एवं पुत्रों को देख–देख कर जलूँ नहीं, कुढूँ नहीं, वरन् उस बहिन का यह सब देख–देख कर सदा प्रसन्नता का अनुभव करूँ, हमेशा खुशी महसूस करूँ, प्रभु का हृदय से धन्यवाद करूँ कि चलो एक बहिन तो ऐसी है जो सब प्रकार से प्रसन्न है, खुशहाल है, सुख–सौभाग्य से सम्पन्न है। उसके यहाँ कार भी है, उसकी अपनी कोठी भी है। भगवान् ने बच्चे भी उसे बड़े प्यारे–प्यारे दिये हैं, जो बड़े ही अच्छे हैं, अच्छे खासे स्कूल में पढ़ रहे हैं, सुयोग्य हैं। भगवान् की कृपा से मेरी बहिन को कुछ आर्थिक कठिनाईयाँ भी नहीं हैं, आदि–आदि। उस बहिन के बढ़ते हुए यश को देख कर वह बहिन सदा यही अनुभव करती है जैसे कि उसका अपना ही यश बढ़ रहा हो। उसके बढ़ते हुए धन–वैभव, सुख–सौभाग्य को देखकर वह सदा यही अनुभव करती है कि–जैसे उसका अपना ही धन–वैभव, सुख–सौभाग्य बढ़ रहा हो। उसकी होती हुई प्रशंसा सुनकर भी वह ऐसा ही अनुभव करती है जैसे कि उसकी अपनी ही प्रशंसा हो रही हो। और अगर उसके विपरीत वह उसके उस बढ़ते हुए धन– वैभव, सुख–सौभाग्य, जमीन–जायदाद, कार–कोठी, पुत्र– पौत्री आदि को देख–देखकर उससे ईर्ष्या करती है, कुढ़ती है, वा द्वेष करती है, अप्रीति करती है वा उसे देख–देख कर अपने भाग्य को कोसती है, तो फिर वह इस बहिन से स्नेह की बात तो दूर रही, यह तो फिर उसकी तब शक्ल भी नहीं देखना चाहेगी, फिर तो वह सदा उसकी निन्दा करेगी और कहेगी कि–उसको अपने धन–वैभव का, कार–कोठी का, अपने पुत्र– पौत्रों का, अपने पति –पुत्र के पदों एवं प्रतिष्ठाओं का बड़ा अभिमान है, बड़ा गर्व है। ऐसा लगता है कि जैसे उसी के पास ही यह सब कुछ आ गया हो। पर इस धरती पर इनसे भी बढ़कर लाखों–करोड़ों ऐसे बड़े लोग हैं। यह अपने को समझती क्या है ? और इसके पास यह सब कुछ अगर है भी और हमारे पास नहीं भी है, तो हम कुछ इस से माँग कर थोड़ी ही खाते हैं। अपनी मेहनत–मजदूरी करते हैं, खून–पसीना एक करते हैं, फिर जो भी कुछ हमें मिलता है, उसी में ही हम अपना काम चलाते हैं। हमने जीवन में तो कभी चार पैसे भी इससे नहीं माँगे होंगे! हाँ छोटी बहिन होने के कारण कभी मिलना हुआ तो कुछ न कुछ उसे दिया ही होगा। और फिर इस माया का भी क्या ठिकाना! आज इनके पास है, कल इसको छोड़कर वह कहीं और अपना ठिकाना बना ले, तो फिर तब तो ये हम से भी गए–बीते हो जायेंगे। इसलिये इस धन–वैभव आदि–आदि पर इसका अहंकार में रहना हमें जरा भी अच्छा नहीं लगता इत्यादि।

इस प्रकार के ईर्ष्या–द्वेष भरे चिन्तनों से तो फिर मनुष्य का मन प्रायः खराब ही रहता है। और फिर जब एक बहिन वा भाई का मन इतना खराब रहता है तो फिर दूसरी बहिन वा भाई का मन भी क्या अच्छा रहेगा? और कब तक अच्छा रहेगा ? अतः वेद का उपदेश है–वेद का आदेश है कि हर बहिन को चाहिये कि वह अपनी बहिन से द्वेष न करे, अप्रीति न करे, शत्रुता न करे, दुश्मनी न करे, वैर विरोध न करे, ईर्ष्या न करे, घृणा न करे, नफरत न करे, वरन् हर बहिन अपनी दूसरी बहिन को देख वा सुनकर उससे प्रीति ही करे, प्रेम ही करे, स्नेह ही करे, लाड–प्यार ही करे और अगर आवश्यकता पड़े तो जी–जान से उसका सहयोग करे, उसकी मदद ही करे, उसकी इमदाद ही करे। और अगर बहिन बड़ी हो, तो उसका मान–सम्मान करे, उसकी आव–भगत करे, उसकी सेवा–शुश्रुषा करे, उसको मातृ तुल्य सिर–आँखों पर बैठाये। यही व्यवहार वास्तव में भाई–भाई को और बहिन– बहिन को परस्पर एक सूत्र में पिरोए रख सकता है, शरीर से भिन्न–भिन्न होते हुए भी हृदय से उन्हें एक बनाए रख सकता है, घर–परिवार से अलग–अलग रखकर भी दिल से उन्हें एक बनाए रख सकता है, स्थान की दृष्टि से दूर–दूर वर्त्तमान होने पर भी हृदय से उन्हें सन्निकट बनाए रख सकता है, दोनों की भिन्न–भिन्न समस्याओं के रहने पर भी उनके निवारण के लिए उन्हें एक जुट होकर सोचने–विचारने एवं आचरण करने वाला बना सकता है। कहने को वे भले ही खरबूजे की तरह बाहर से पृथक्–पृथक् ही प्रतीत होते हों, पर वैदिक व्यवहार, उन्हें भीतर से खरबूजे की तरह एक ही बनाये रखता है। हाँ, यदि वेदानुसार वे द्वेष से, अप्रीति से, शत्रुता से, वैर से, दुश्मनी से ऊपर कभी न उठ सकेंगे, तो फिर वे सन्तरे की तरह बाहर से एक प्रतीत होने पर भी बाह्य आवरण के हटते ही वे फाँक–फाँक के रूप में तब पृथक्–पृथक् भासने लगेंगे–शरीर से भले ही वे भाई–भाई वा बहिन–बहिन एक–दूसरे से मिलते–मिलाते हुए दिखाई देंगे, पर हृदय से वे पृथक्–पृथक् ही होंगे। भले ही वे एक ही घर में वा एक ही शहर में वा एक ही जनपद वा प्रान्त के होंगे, पर हृदय से वे आपस में इतनी दूर होंगे कि देखने वाला दंग रह जायेगा। इस प्रकार भाई–भाई की, बहिन– बहिन की वृत्ति – प्रवृत्तियों को देख–देखकर फिर उनकी आने वाली पीढ़ियों पर भी वैसा ही प्रभाव पड़ने से तब उनमें भी परस्पर प्रेम नहीं वरन् द्वेष ही बढ़ेगा, आकर्षण नहीं वरन् विकर्षण ही बढ़ेगा। इसलिए हर एक भाई–बहिन को यह चाहिए कि वह अपने भाई एवं बहिन के प्रति, प्रीतिमय–तृप्तिमय व्यवहार करे। अर्थात् वह ऐसा व्यवहार ही करे कि जिससे उसका भाई एवं बहिन तृप्त हो, प्रसन्न हो, खुश हो.......।

इस प्रकार के ईर्ष्या-द्वेष भरे चिन्तनों से तो फिर मनुष्य का मन प्रायः खराब ही रहता है। और फिर जब एक बहिन वा भाई का मन इतना खराब रहता है तो फिर दूसरी बहिन वा भाई का मन भी क्या अच्छा रहेगा? और कब तक अच्छा रहेगा ? अतः वेद का उपदेश है-वेद का आदेश है कि हर बहिन को चाहिये कि वह अपनी बहिन से द्वेष न करे, अप्रीति न करे, शत्रुता न करे, दुश्मनी न करे, वैर विरोध न करे, ईर्ष्या न करे, घृणा न करे, नफरत न करे, वरन् हर बहिन अपनी दूसरी बहिन को देख वा सुनकर उससे प्रीति ही करे, प्रेम ही करे, स्नेह ही करे, लाड-प्यार ही करे और अगर आवश्यकता पड़े तो जी-जान से उसका सहयोग करे, उसकी मदद ही करे, उसकी इमदाद ही करे।

लेखक की पुस्तक
'वैदिक रश्मियाँ' से साभार

☞ पृष्ठ 02 का शेष

प्रभु-भक्ति

"यह जो ब्रह्मपुर (शरीर) है इसमें एक छोटा—सा (हृदय) कमल का मन्दिर है, इस मन्दिर के पीछे एक छोटा—सा आकाश है। इस आकाश के भीतर जो कुछ है, उसका अन्वेषण करना चाहिए, उसकी जिज्ञासा करनी चाहिए।" यही 'कमल का मन्दिर' भक्त और भगवान् का मिलन—स्थान है और वह इसी ब्रह्मपुर या शरीर के ही अन्दर है, इसी स्थान पर उसकी खोज करनी होती है। इसी स्थान का नाम वह 'गुहा' है, जिसके सम्बन्ध में यजुर्वेद कहता है कि **'वेनस्तत् पश्यन्निहितं गुहा'** अर्थात् ज्ञानी पुरुष उस सत् ब्रह्म को हृदय की गुहा में निहित देखता है। यही बात अथर्ववेद के दूसरे कांड के पहले ही मन्त्र में कही है—

वेनस्तत्पश्यत्परमं गुहा यद्यत्र
विश्वं भवत्येकरूपम्।।

"योगी उसे परमगुहा में देखता है। यहाँ सारा विश्व एकरूप हो जाता है, अर्थात् भक्त के लिए फिर प्रभु के अतिरिक्त और कोई भी वस्तु देखने योग्य नहीं रहती।" यही है वह ब्रह्मपुर, जिसका उल्लेख मुण्डक—उपनिषद् में शब्दों में किया गया है—

यः सर्वज्ञः सर्वविद् यस्यात्र महिमा भुवि।
दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष व्योम्न्यात्मा प्रतिष्ठितः।।

"जो सबको जानता है और सबको समझता है, जिसकी इस भूमि पर (प्रत्यक्ष) महिमा है, वह आत्मा दिव्य ब्रह्मपुर (हृदय) हृदयाकाश में रहता है।"

स्वर्ग भी इसी को कहा जाता है। स्वर्ग संसार का कोई विशेष स्थान नहीं है अपितु इसी शरीर के अन्दर ही वह स्वर्ग विद्यमान है। वेद भगवान् ने तो स्वर्ग का बहुत ही सुन्दर और विस्तृत विवरण दिया है—

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या।
तस्यां हिरण्मयः कोशः
स्वर्गो ज्योतिषाऽऽवृतः।।

"यह देवताओं का दुर्ग, जिसके आठ चक्र और नौ द्वार हैं और जिसको जीतना दुष्कर है, उसमें ज्योति से भरपूर स्वर्ग है और उसी में सुनहरी कोश है। यह आठ चक्रों और नौ द्वारों वाली अयोध्या नगरी है।" यह यूरोप, अफ्रीका, एशिया, भारत अथवा अन्तरिक्ष लोक या द्युलोक में तो कहीं दिखाई नहीं देती, अपितु यह नगरी हर देश, हर आम और हर घर के अन्दर देखी जा सकती है। वह है मनुष्य—शरीर। मनुष्य—शरीर ही में नौ द्वार हैं—दो नेत्र, दो नासिकाएँ, दो कान, एक मुख, दो मल—मूत्र त्यागने के स्थान—ये नौ द्वार इस नगरी के स्पष्ट दिखाई देते हैं और आठ चक्र—वे इसी शरीर में हैं। हठयोग के विद्वानों का कथन है कि इस शरीर में निम्न आठ चक्र हैं। इनके द्वारा प्राण ऊपर चढ़ता हुआ ब्रह्म—द्वार में प्रवेश कर सकता है—

1. **मूलाधार चक्र**
2. **स्वाधिष्ठान चक्र**
3. **मणिपूरक चक्र**
4. **अनाहत चक्र**
5. **हृदय चक्र**
6. **विशुद्ध चक्र**
7. **आज्ञा चक्र**
8. **ब्रह्म चक्र**

पहला चक्र गुदा स्थान पर है, दूसरा पेडू में, तीसरा नाभि में, चौथा हृदय के निकट, पाँचवाँ हृदय के अन्दर, छठा कण्ठ में, सातवाँ भ्रू—मध्य में और आठवाँ शिखा के नीचे।

जब ब्रह्म के दर्शन करने होते हैं तो इस नगरी के बाहर के सब द्वार बन्द करके इन आठ चक्रों में से होकर स्वर्ग के अन्दर पहुँचना होता है। तब वहाँ ज्योति दिखाई देती है और वहीं अपने परमप्रिय का दर्शन होता है।

मन्दिर की सफ़ाई—

वेद भगवान् तथा उपनिषद् ने जब बतला दिया कि मनुष्य का शरीर ही भगवान् का मन्दिर है फिर किसी आस्तिक को इसमें सन्देह नहीं रह जाता और निश्चय ही मैं यह निवेदन केवल आस्तिक भक्तों के ही सम्मुख रख रहा हूँ। भगवान् के इस मन्दिर में पूजा और भक्ति के लिए जाने से पूर्व अत्यन्त आवश्यक है कि मन्दिर की सफाई की जाये। पूजा—पाठ का स्थान स्वच्छ ही होना चाहिए। सफाई दो प्रकार की है बाह्य और भीतरी। बाह्य सफाई स्वच्छ जल इत्यादि से हो जाती है, परन्तु भीतरी सफाई के लिए विशेष प्रयत्न करना होता है। उसके कुछ नियम ये हैं—

प्रातः 4 बजे बिस्तर से अवश्य उठ जाने का नियम बना लेना चाहिए और फिर शौच आदि से निवृत्त होकर दाँत साफ करने चाहिएँ, फिर व्यायाम, आसन इत्यादि करने चाहिएँ जिससे शरीर बिल्कुल थक तो न जाये, परन्तु इसके प्रत्येक अंग में स्फूर्ति अवश्य आ जाए, फिर स्नान करना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो स्नान के पश्चात् व्यायाम करने का नियम बनाया जा सकता है। पेट की सफाई की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। यदि वैसे पेट भली—भाँति साफ न हो तो भोजन में ऐसा परिवर्तन कर देना चाहिए, जिससे पेट साफ हो जाये। जिनका पेट ठीक तरह साफ नहीं होता उनको हाथ की चक्की से पिसे हुए मोटे आटे की रोटी खानी चाहिए। हरी तरकारियों का प्रयोग अधिक करना चाहिए, दूध अधिक पीना चाहिए और घी में भुनी हुई हरीतकी (हरड़) का सेवन करना चाहिए। जिनका पेट इन वस्तुओं से भी साफ न हो, वे फिर महीने में एक—दो बार वस्ति (अनीमा) कर लिया करें।

क्रमशः

☞ पृष्ठ 05 का शेष

ईश्वर विचार

विशेष उल्लेख है क्योंकि ये सब से अधिक उपकारी हैं, गाय का नाम धेनु है अर्थात् वह पीने के लिए दूध देती है। इस यौगिक अर्थ में वे सब पशु धेनु हैं जिनका दूध पिया जाता है। भारत में गाय, भैंस और बकरी धेनु हैं। अरब में ऊँटनी भी धेनु है, क्योंकि अरब वाले ऊँटनी का भी दूध पीते हैं। इस प्रकार 'अर्वत्' नाम है घोड़ों का। घोड़े को 'वाजी' भी कहते हैं, जहाँ गधे की सवारी करते हैं वहाँ 'गधा' भी वाजी है। अनड्वान् (अनस्+वह) नाम बैल का है क्योंकि वह अनस् अर्थात् गाड़ी को खींचता है। वे सब पशु जो गाड़ियों को खीचते हैं बैल, भैंस, ऊँट, पहाड़ी बकरे ये सब 'अनड्वान्' कहलाने के योग्य हैं। इन की रक्षा करना उसी प्रकार मनुष्य का कर्त्तव्य है जिस प्रकार अपने नौकर चाकरों की।

इन सब पशुओं में गाय को सबसे श्रेष्ठ माना गया है। 'गो' शब्द के संस्कृत भाषा में कई अर्थ हैं, नीचे का श्लोक पाठकों के मनोविनोद के लिए देते हैं—

क्षीरं चान्नं तथा ज्ञानं, लोकेभ्यो दीयते यया।
गोमाता सा सदा सेव्या, धेनुः पृथ्वी सरस्वती।।

धेनु हमारी माता है क्योंकि वह दूध पिलाती है, पृथ्वी माता है क्योंकि वह अन्न देती है। सरस्वती (वाणी) माता है क्योंकि वह ज्ञान देती है, धेनु पृथ्वी और वाणी तीनों के लिए संस्कृत में 'गो' शब्द आता है। अतः 'गोमाता' तो सदा ही सेव्या अर्थात् सत्कार के योग्य है। इसी आशय का एक वेद मन्त्र भी है—

इन्द्रा युवं वरुणा भूतमस्या धियः
प्रेतारा वृषभेव धेनोः।
सा नो दुहीयद् यवसेव गत्वी
सहस्त्रधारा पयसा मही गौः।।

ऋग्वेद 4.41.4

हे इन्द्र और वरुण तुम दोनों, हमारी इस प्रार्थना के प्रेरक हूजिये, जैसे बैल गाय के। यह प्रार्थना हम को इस प्रकार फल देवे जैसे घास खाने वाली बड़ी गाय सहस्रधार दूध से हम को तृप्त करती है।

इहैव गाव एतनेहो शकेव पुष्यत।
इहैवोत प्र जायध्वं मयि संज्ञानमस्तु वः।।

अथर्ववेद 3.14.4

(गावः) हे गौओ, **(इह एव एतन)** मेरे घर में आओ, **(शका इव पुष्यत)** भोजन खा—खा कर पुष्ट होओ, **(इह एव उत प्रजायध्वं)** यहीं बच्चे उत्पन्न करो, **(मयि वः संज्ञानम् अस्तु)** मुझमें तुम्हारा प्रेम होवे।

संजग्माना अबिभ्युषीरस्मिन् गोष्ठे
करीषिणी।
बिभ्रतीः सोम्यं मध्वनमीवा उपेतन।।

अथर्ववेद 3.14.3

(अस्मिन् गोष्ठे) इस गोशाला में, **(अबिभ्युषीः)** बिना किसी भय के, **(संजग्मानाः)** साथ—साथ प्रेम से रहो, **(करीषिणीः)** और यहीं गोबर करो, **(सोम्यं मधु बिभ्रतीः)** सोम के समान गुणकारी मीठा दूध दो, **(अनमीवा उपेतन)** और तुम को कोई रोग न हो।

मया गावो गोपतिना सचध्वमयं वो
गोष्ठ इह पोषयिष्णुः।
रायस्पोषेण बहुला भवन्तीर्जीवा
जीवन्तीरुष वः सदेम।।

अथर्ववेद 3.14.6

(गावः) हे गौओ, **(मया गोपतिना सचध्वम्)** मुझ गोपति के साथ रहिये, **(अयं गोष्ठः इह)** यहाँ यह गोशाला, **(वः पोषयिष्णुः)** तुम्हारी पोषण करने वाली हो, **(रायस्पोषेण बहुला भवन्तीः)** धन धान्य से पुष्ट होकर तुम बढ़ो, **(जीवाः)** हम जीव लोग, **(जीवन्तीः वः उपसदेम)** जीती हुई तुम गौओं की सेवा करें। इस मन्त्र में गोरक्षा और गोरक्षा से धन धान्य की संवृद्धि का कथन है, **'जीवन्तीः वः'** इन शब्दों से स्पष्ट है कि गायों को यज्ञ में मारने या मांस खाने का संकेत तक नहीं है। वैदिक संस्कृति में किसी प्राणी को कष्ट पहुँचाने का प्रसङ्ग नहीं है। इसका मूल मन्त्र है—सभी का कल्याण और सभी का विकास। मनुष्य को यह अधिकार नहीं कि अपने स्वार्थ के लिए किसी की हिंसा करे। **'अहिंसा परमो धर्मः।'**

क्रमशः

'गंगा ज्ञान सागर' सम्पादक
प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु से साभार

पत्र/कविता

इन्द्रधनुष

आर्यों का अज़्म[1]

(ऋषि दयानन्द से !)

तेरी सुलगई हुई आग पे राख आई है।
रुखे–तनवीर[2] पे कुछ तीरगी[3] सी छाई है।
है ज़मीं पूर अभी तारों का थिरकता साया।
अभी खुर्शीद[4] ज़ियाबार[5] नहीं हो पाया।
गो तेरी कोशिशों से फस्ले[6]–ख़िज़ाँ दूर हुई।
आह ! पर अपना मुकद्दर[7] कि बहार आ न सकी।
कल्बे मज़लूम[8] नहीं पंजा–ए–शर[9] से छूटा।
रहज़नों से जो बचा, राहबरों ने लूटा।
वह्म के जुह्ल[10] के पहरे हैं दिमागों पे अभी।
उफ यह तूफानों की यलग़ार[11] चिरागों ये अभी।
दिन ब दिन रास्ता दुश्वार हुआ जाता है।
आदमी जीने से बेज़ार[12] हुआ जाता है।
हे महर्षि हम भी मगर अज़्मे–जवाँ पाते है।
तेरे फौलादी इरादों की कसम खाते हैं।
तेरे दीवाने बसद शौक[13] हर इक गम लेंगे।
इस अँधेरे को मगर चीर के ही दम लेंगे।
तीरा–ओ[14]–तार गजरगाहों[15] पे नूर आयेगा।
"इन्कलाब आयेगा, आयेगा, जरूर आयेगा!"

{1. दृढ़ निश्चय 2. प्रकाशं 3. अन्धकार 4. सूर्य 5. प्रकाशमान 6. पतझड़ 7. भाग्य 8. दुःखीमन ह्रदय 9. अत्याचार के हाथ से 10. अज्ञान 11. आक्रमण 12. उदासीन 13. तीव्र भावना के साथ 14. अन्धेरा 15. मार्गों}

उत्तमचन्द 'शरर'
इन्द्रधनुष से साभार

चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

1900 में राजाजी बैरिस्टर बन गए। उस दिनों वे 'सीआर' के नाम से तेज तर्रार वकील के तौर पर जाने जाते थे लेकिन उनका मन आज़ादी की लड़ाई के लिए बेचैन था। तिलक उनके हीरो थे। वे सीधी बात भी व्यंग्य में कहते थे। एक बार वे किसी अंग्रेज़ के साथ ट्रेन में सफ़र कर रहे थे। अंग्रेज़ ने कहा बहुत गर्मी है। सीआर बोले–गर्मी है मगर इतनी ज्यादा नहीं। इस पर अंग्रेज़ ने कहा–मतलब ! तो राजाजी का जवाब था–अभी देश में इतनी गर्मी नहीं है कि आप जैसे महाशय देश छोड़कर चले जाएँ। सीआर गाँधीजी के दक्षिण अफ्रीका के काम से बहुत प्रभावित थे। मार्च 1919 में जब गाँधी जी पहली दफ़ा मद्रास आये तो सीआर उनके मेजबान की भूमिका में थे।

अगले दिन अखबार में खबर छपी कि रोलेट बिल गजट हो गया। गाँधी जी ने सीआर को फिर बुलाया और कहा–"रात में मुझे सपना आया कि मैं इस बिल के विरोध में सारे देश में हड़ताल करूँ। ये आत्मशुद्धि की धार्मिक लड़ाई है इसलिए लड़ाई अहिंसक हो, देश की जनता शांति से कानून का विरोध करे। सभी लोग उपवास और रोजा रखें। कामकाज बंद रहे। ये राय राजाजी को पंसद आई। तुरंत नोटिस तैयार हुआ। पहले हड़ताल की तारीख 30 मार्च रखी गई। बाद में ये 6 अप्रैल 1919 कर दी गई यानि देश के पहले सबसे बड़े आन्दोलन की सलाह बापू ने राजाजी से ली थी। 1919 के रोलेट एक्ट के विरोध में वे पहली बार जेल भी गए। सीआर गाँधी जी से केवल नौ साल छोटे थे इसलिए दोनों में बहुत जल्दी गहरी दोस्ती हो गई। 1930 के सत्याग्रह में उन्होंने पूरे दक्षिण भारत को आंदोलित किया, इसलिए कोई हैरत नहीं कि इतिहासकार एंटोनी कोपले ने उन्हें गांधी का दक्षिण का सेनापति नाम दिया। उनका जन्म ब्रिटिश हुकूमत में 10 दिसम्बर 1878 को तमिलनाडू के सेलम जिले के थोरापल्ली गाँव में हुआ था। उनके पिता चक्रवर्ती वेंकटरैया विक्टोरिया राज में मुंसिफ थे। वेंकटरैया के पूर्वज दयालू ब्राह्मण थे। उन्होंने एक लावारिश दलित शव का अंतिम संस्कार किया तो रूढ़िवादी ब्राह्म ण समाज उनसे नाराज हो गया। पर इस नेक काम के लिए उन्हें इलाके में 'नल्लन' (अच्छे–और उदार) चकवर्ती की उपाधि मिली। इसी वजह से राजाजी अपने नाम के आगे चक्रवर्ती लिखने लगे।

वे पढ़ने बेंगलुरू और फिर चेन्नई चले गए। फिर वे सेलम में ही रहकर अच्छी वकालत करने लगे। उनका अपने गाँव आना–जाना धीरे–धीरे कम होता गया। उनका अधिकांश वक्त बेंगलुरू और चैन्नई में बीता। लेकिन उन्होंने कहीं अपना कोई निजी बंगला नहीं खरीदा। उनके पास अपनी कोई कार तक नहीं थी। राजाजी के समय का तो अब गाँव में कोई नही बचा। उसके बाद की भी एक पीढ़ी खत्म हो चुकी है, लेकिन गाँव में ये सबको जरूर पता है कि उनके गाँव में राजाजी नाम का एक लड़का पैदा हुआ था, जो गांधी जी का पक्का दोस्त था। वह देश का अखिरी गवर्नर जनरल, गृहमंत्री और उसके बाद वो उनके राज्य का सीएम बना।

गांधी जी के पुत्र देवदास राजाजी की पुत्री लक्ष्मी के प्रेम में पड़ गये थे। एक गुजराती वैश्य और दूसरी मद्रासी ब्राहमण। गांधी जी और राजाजी दोनों चकित थे। बापू को दो साल बाद ही सहमति देनी पड़ी। 1933 में देवदास व लक्ष्मी वैवाहिक सूत्र में बंध गए। राजाजी शुरु से नेहरु के चीन प्रेम के खिलाफ थे। आजादी बाद से ही गृहमंत्री रहते वे नेहरु को समझाते थे कि चीन की नीति विस्तारवाद की है। वह किसी का दोस्त नही हो सकता। लेकिन ये बात नेहरु नही समझे और 1962 में चीन ने भारत पर हमला का दिया और लद्दाख का बड़ा हिस्सा अपने कब्जे में ले लिया। इस सदमें से नेहरु उबर नही पाए। नेहरु की मृत्यु के आठ साल बाद 26 दिसंबर 1972 को राजाजी भी 94 की उम्र में चल बसे। उपनिषद् का ये श्लोक उन्हें बहुत पंसद था। जिसका अनुवाद कुछ इस तरह है–शरीर राख में मिल जायेगा / साँसे कभी ना मरने वाली हवा में विलीन हो जाएगी / पीछे केवल कर्म रह जाएगा / हे मन, इसे सदा याद रखना याद रखना।

स्वामी गुरुकुलानन्द 'कच्चारहारी'
पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड)
'इतिहास के बिखरे पन्ने' से साभार

****

धामन्ते विश्वं भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि।
अपामनीके समिथेऽआभृतस्तमश्याम मधुमन्तंतऽऊर्मिम्।।
यजु.17.99

यह सकल जग धाम तेरा।
तू रमा है सिन्धु में, तू
हृदय में, तू रमा जीवन में सारे।
सलिल तल पर उठ रही हैं, मधुमयी ऊंची हिलोरें,
मधुर तेरी ऊर्मि[9] का उस
देव, हम आस्वाद पायें।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

अखिल भारतीय वैदिक...

पुर भुवनेश्वर **तृतीय,** इसके अतिरिक्त तीन–तीन महिला एवं पुरुष वर्ग को सांत्वना पुरस्कारों के लिए चुना गया। महिला वर्ग में श्रीमती श्रावणी, श्रीमती शिल्पी पाल एवं श्रीमती रंजना चटर्जी और पुरुष वर्ग में श्री आशीष, श्री मात्रा प्रसाद एवं श्री राजेन्द्र पाल को चुना।

सभा की ओर से प्रथम पुरस्कार विजेता को 11000/– रुपये, द्वितीय पुरस्कार विजेता को 7500/– रुपये तृतीय पुरस्कार विजेता को 5000/– रुपये तथा छः प्रतियोगियों को सांत्वना पुरस्कार स्वरूप 3000/– रुपये प्रति प्रतियोगी प्रदान किए गए। इसके अतिरिक्त 24 प्रतियोगियों को 2000/– रुपये की राशि प्रदान की गई।

समापन सत्र की अध्यक्षता श्री प्रबोध महाजन, वरिष्ठ उपप्रधान, आर्य

प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने की। उनके साथ श्री अजय सूरी जी उपस्थित रहे। श्री प्रबोध महाजन ने छात्रों के सर्वांगीण विकास में संगीत शिक्षकों की भूमिका को रेखांकित किया।

सभा मंत्री श्री एस.के. शर्मा ने कहा कि आप विद्यालयों में अपनी कला के माध्यम से, भजनों व संगीत से एक सकारात्मक क्रांति ला सकते हैं। इसके लिए आप नियमित रियाज़ करके अपनी योग्यता को उच्चतर स्तर पर ले जाएँ।

प्रतियोगिता में दिल्ली विश्वविद्यालय संगीत संकाय से सेवा निवृत प्रो. (डॉ) शैलेन्द्र कुमार गोस्वामी, विदुषी प्रो. उमा गर्ग, एवं प्रो. डॉ. राधा वैंकटाचलम् को निर्णायक के रूप में आमन्त्रित किया गया था। उनके अनुसार प्रतियोगिता में इस वर्ष पिछले वर्षों की तुलना में अधिक कड़ा मुकाबला देखने को मिला। अन्त में सभा मन्त्री द्वारा सभी का हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित किया।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

पश्चिम बंगाल में 'चरित्र निर्माण शिविर'

दिया जाएगा।

दूसरे दिन हेतु पुरुलिया शहर में जन–चेतना यात्रा का आयोजन हुआ।

शोभायात्रा के पश्चात् 51 कुण्डीय महायज्ञ का प्रारम्भ हुआ। जिसकी मुख्य यजमान स्वयं उपसभा प्रधान पापिया मुखर्जी रहीं।

छात्रों की सामूहिक भजन–गायन प्रतियोगिता और वैदिक संध्या (ब्रह्मयज्ञ) के मंत्रों की मंत्रोच्चारण प्रतियोगिता आयोजन किया गया। कक्षासज्जा प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। कक्षा सज्जा प्रतियोगिता बालक वर्ग में प्रथम पुरस्कार डीएवी पब्लिक स्कूल, एस.टी.पी एस. सांथालडिह ने

काल 21 कुण्डीय महायज्ञ के साथ यज्ञ प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया। प्रक्षेत्र के प्रत्येक विद्यालय के छात्रों ने अपने–अपने हवनकुण्ड पर स्वयं यज्ञ किया अनुशासन प्रतियोगिता के रूप में छात्रों ने जीवन ने अनुशासन के महत्त्व को आता सात।

समापन समारोह में डीएवी पब्लिक स्कूल, पुरुलिया के अध्यक्ष श्रीमान खेडिया ने एवं विभिन्न विद्यालयों के प्राचार्यगण तथा सभी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को बधाई दी एवं उत्साहवर्धन किया। डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पुरुलिया के विद्यार्थियों द्वारा स्वामी दयानंद सरस्वती जी के जीवन

और द्वितीय पुरस्कार डीएवी मॉडल स्कूल, के.एस.टी.पी, आसनसोल एवं डीएवी पब्लिक स्कूल, रानीगंज ने और तृतीय पुरस्कार डीएवी पब्लिक स्कूल, रूपनारायणपुर एवं डीएवी पब्लिक स्कूल, बैरकपुर के विद्यार्थियों ने प्राप्त किया।

शिविर के अंतिम दिवस प्रातः

पर आधारित नाटक एवं नृत्य प्रस्तुत किया गया, जिसने सभी दर्शकों का मन मोह लिया।

विद्यालय के अध्यक्ष एवं समस्त प्राचार्यों ने मिलकर ध्वज–अवतरण किया, एवं शांतिपाठ के साथ चरित्र निर्माण शिविर का औपचारिक समापन हुआ।

डी.ए.वी. अमृतसर में 'हमारा संविधान हमारा स्वाभिमान' कार्यक्रम

डी.ए.वी. इंटरनैशनल स्कूल, अमृतसर में 77वें गणतंत्र दिवस के अवसर पर **'हमारा संविधान, हमारा स्वाभिमान'** का आयोजन किया गया। कार्यक्रम

का शुभारंभ दीप प्रज्वलन से हुआ। सर्वप्रथम राष्ट्रीय ध्वज फहराया गया और देश की प्रगति के प्रतीक तीन रंगों के गुब्बारे हवा में छोड़े गए। इसके उपरांत भारत की आन–बान और शान तीनों सेनाओं की वेशभूषा में सजे बच्चों ने मार्च पास्ट किया।

प्रिंसीपल डॉ. अंजना गुप्ता ने सभी को राष्ट्र के गौरव गणतंत्र दिवस की बधाई दी। उन्होंने कहा कि यह राष्ट्रीय पर्व हर भारतीय के लिए गर्व का उत्सव है। यह दिवस हमारी स्वतंत्रता, लोकतंत्र और भारतीय संविधान के महत्त्व का प्रतीक है इस दिन हमारा देश एक संप्रभु, समाजवादी, धर्म–निरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य बना। यह गरिमामय दिवस हमें उन शहीदों की याद भी दिलाता है जिन्होंने देश को स्वतंत्र कराने के लिए संघर्ष किया। हम सदा सत्य के मार्ग पर चल कर अपने देश के आदर्श नागरिक बनें और इस देश को प्रगति के पथ पर बढ़ाएं, यही हम सबका कर्त्तव्य है। हर बच्चा देश को प्यार करे, बड़ों का सम्मान करे और कठिन परिश्रम करते हुए श्रेष्ठता को प्राप्त करे।

विद्यार्थियों द्वारा गणतंत्र दिवस के महत्व पर प्रभावशाली विचार पेश किए। नाट्य प्रस्तुति के माध्यम से संविधान में दिए गए मौलिक अधिकारों, कारगिल विजय एवं ऑपरेशन सिंदूर को अत्यंत भावपूर्ण ढंग से दिखाया गया। देश भक्ति के गीतों पर आधारित रंगारंग नृत्य प्रस्तुति ने सभी का मन मोह लिया। अंत में विद्यार्थियों ने प्रिंसीपल का हृदय से धन्यवाद किया। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रगान से हुआ।

आर्य समाज 150 स्वर्णिम वर्ष मानव सेवा के 1875–2025

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2026

कोटा से बूंदी मेडिकल कॉलेज को मिला वर्ष का पहला देहदान

इंदिरा कॉलोनी, स्टेशन क्षेत्र कोटा निवासी, प्रेम सिंह परिहार का बीती रात बुधवार को निवास स्थान पर ही आकस्मिक निधन हो गया। आर्य समाज के निति, नियम सिद्धांत को जीवन में आत्मसात करने वाले प्रेम सिंह न सिर्फ प्रकृति प्रेमी थे, बल्कि बालिका शिक्षा,पर्यावरण, बच्चों व महिलाओं के अधिकारों के लिये उन्होंने अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया। प्रेम सिंह आर्य समाज रेलवे कॉलोनी की कोषाध्यक्ष, पाल बघेल क्षत्रिय समाज कोटा के पूर्व अध्यक्ष पद पर रहकर भी उन्होंने समाज के लिए काफी सेवा कार्य किए। वर्ष 2018 में प्रेम सिंह ने अपना नेत्रदान और देहदान का संकल्प पत्र शाइन इंडिया फाउंडेशन के साथ भरा था। परिवार के सदस्यों की सहमति से, उनकी मृत देहदान किया। प्रेम सिंह के बेटे सत्यव्रत, बेटी क्षेमिका, पत्नि कमला, भाई ओमप्रकाश पाल, नित्येंद्र सिंह पाल सहित करीबी रिश्तेदारों ने नम आंखों से कोटा को देहदान किया। उनके अचानक इस

तरह से चले जाने से, पूरे क्षेत्र के सभी आर्यसमाज के सहयोगियों को दुख पहुँचा है। हमारा प्रयास रहेगा कि,उनके सेवा कार्यों को जन–जन तक पहुँचाया जाये। देहदान के उपरांत, संस्था शाइन इंडिया फाउंडेशन और राजकीय मेडिकल कॉलेज, बूंदी की ओर से परिवार को प्रशस्ति पत्र देकर सम्मानित किया गया। इससे पूर्व भी संस्था शाइन इंडिया फाउंडेशन के माध्यम से बूंदी को सर्वप्रथम पहला देहदान केशोरायपाटन निवासी स्व. पिंकी छाबड़ा का वर्ष 2023 में, वर्ष 2025 में स्व. सुरेंद्र कुमार विजयवर्गीय का देहदान हुआ था। इस दौरान अरविंद पाण्डेय, प्रधान, आर्य उप प्रतिनिधि सभा कोटा संभाग, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, संरक्षक आर्य उपप्रतिनिधि सभा, कोटा संभाग, चन्द्रमोहन कुशवाह महामंत्री. आर्य उप प्रतिनिधि सभा कोटा संभाग सहित इस पुनीत कार्य में पंडित बद्रीचंद शास्त्री का महत्वपूर्ण योगदान रहा। सभी के सहयोग से परिवार की इच्छा से पूरे विधि विधि विधान से यह कार्य संपन्न करवाया।

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में स्वामी दयानन्द जन्मोत्सव

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 202वें जन्म दिवस के उपलक्ष्य में विद्यालय सभागार में यज्ञ का आयोजन किया निवारण में उनका महत्वपूर्ण योग दान रहा है। समाज के प्रत्येक क्षेत्र के लिए उन्होंने जो तार्किक दृष्टि प्रस्तुत की है वह विलक्षण है। हम सौभाग्यशाली है

गया। प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल की उपस्थिति में कक्षा दसवी. –बारहवी. के छात्र–छात्राएँ, अध्यापक अध्यापिकाएँ सम्मिलित हुए तदुपरान्त प्रधानाचार्या श्रीमती रश्मिराज बिस्वाल जी ने महर्षि दयानंद जी के जीवन दर्शन को स्मरण करते हुए कहा कि महापुरुषों का जीवन हमें प्रेरित करता है। कोई भी समाज अपने महापुरुषों से ही जीवन प्राप्त करता है। वे अपनी विवेक बुद्धि से समाज का विशेष मार्गदर्शन करते है। महर्षि दयानंद जी का स्त्री शिक्षा समानता के लिए उल्लेखनीय योगदान रहा है और सामाजिक कुरीतियों के कि हम उस गौरवशाली संस्था में काम कर रहे, जो उनकी स्मृति मै स्थापित है।

साथ ही कक्षा दसवीं बारहवी के विद्यार्थियों को प्रधानाचार्या जी ने परीक्षा के लिए उपयोगी अनिवार्य निर्देश देते हुए विद्यार्थियों को पुरुषार्थ और सदा प्रसन्नता में अपने को बनाएँ रखने का निर्देश दिया। साथ ही तनाव से दूर रहने का आग्रह भी किया। अंत में प्रधानाचार्या ने बोर्ड परीक्षा में अच्छे परिणाम की सभी को शुभकामनाएँ दी। शांति पाठ, प्रसाद वितरण के बाद कार्य क्रम समाप्त हुआ।

डी.ए.वी. खारघर में ऋषि लंगर

महर्षि दयानंद सरस्वती की 202वीं जयंती के शुभ अवसर पर डी.ए.वी. इंटरनेशनल स्कूल खारघर में आर्य समाज के संस्थापक, महान् समाज–सुधारक ऋषिवर दयानन्द द्वारा दी छात्रों को उत्साहित एवं प्रेरित किया। अपने उद्बोधन में उन्होंने ऋषिवर दयानन्द के अतुलनीय योगदान, उनके त्याग, परिश्रम और निष्काम सेवा की प्रशंसा करते हुए इन गुणों को अपने जीवन में आत्मसात करने के लिए सभी

गयी शिक्षाओं के साथ अग्रसर होने का प्रयास करते हुए एवं समस्त जनमानस को समरसता समभाव, दयाभाव, एकता और सबको साथ लेकर चलने का सन्देश देते हुए विशिष्ट कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस अवसर पर छात्रों ने ऋषिगाथा की प्रस्तुति से सबका मन मोह लिया तथा ऋषिवर के जीवन व डी.ए.वी. स्थापना की पृष्ठभूमि पर आधारित एक उत्तम नाटिका का प्रस्तुतीकरण किया गया। विद्यालय की प्रधानाचार्या महोदया श्रीमती सीमा मेंदीरत्ता ने अपने प्रेरणादायक विचारों से को प्रेरित किया।

ततपश्चात् ऋषिलंगर अर्थात् सहभोज का आयोजन किया गया। सभी छात्रों और शिक्षकों ने इसमें उत्साहपूर्वक भाग लिया। संसार के सभी प्राणियों हेतु भोजन, ऊर्जा, एवं बल की प्रार्थना भावना के साथ भोजन मन्त्र के उच्चारण के पश्चात् भोजन ग्रहण करने, भोजन परोसने तथा अपने भोजनपात्र को स्वतः स्वच्छ करने का आचरण का प्रशिक्षण प्राप्त कर छात्रों ने वैदिक सिद्धान्तों को सीखा।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**